योग प्रशिक्षण सहायक

व्यावसायिक पाठ्यक्रम स्तर 3.0

राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा मान्यता प्राप्त

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Phone : (0734) 2502266, 2502254, E-mail : msrvvpujn@gmail.com, website - www.msrvvp.ac.in

योग प्रशिक्षण कनिष्ठ सहायक

प्रधान सम्पादक

प्रो. विरूपाक्ष वि. जड्डीपाल्

सचिव

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

लेखक

श्री अभिजीत राजपूत

एम०ए०, पीजीडीवाई.एड (योग शिक्षक)

प्रधान संयोजक

डॉ.अनूप कुमार मिश्र

सहायक निदेशक, प्रकाशन एवं शोध अनुभाग

आवरण एवं सज्जा : श्री शैलेन्द्र डोडिया

तकनीकी सहयोग एवं टङ्कण :

चित्राङ्कन : श्रीमती प्रीति मेहता

© महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जयिनी

ISBN : मूल्य :

संस्करण : 2024

प्रकाशित प्रति PDF

प्रकाशक : महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान

(शिक्षामन्त्रालय, भारत सरकार की स्वायत्तशासी संस्था)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Email: msrvvpujn@gmail.com, Web: msrvvp.ac.in

दूरभाष (0734) 2502255, 2502254

भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की पाठ्यचर्या एवं राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन का उद्देश्य शिक्षण विकास एवं प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षार्थियों का सर्वांगीण विकास कर रोजगार प्रदान करना है। महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान उज्जैन सदैव शैक्षिक नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर रहा है अतः आदर्श वेद विद्यालयों, पाठशालाओं एवं भारत के विद्यालयों में वैदिक कौशल विकास शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा अनेकानेक गतिविधियों के माध्यम से शिक्षार्थियों को रोजगार के अवसर प्रदान कर रहा है, जिससे शिक्षार्थी प्रशिक्षण के ज्ञानार्जन द्वारा स्वयं को अद्यतन एवं जागृत कर सकेंगे तथा इसके विषय ज्ञान का लाभ अपने दैनन्दिन जीवन के साथ-साथ आजीविका प्राप्त कर राष्ट्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे।

योग प्रशिक्षण कनिष्ठ सहायक पाठ्यपुस्तक में इकाईयों के विषयों को विविध आयामों के साथ सहज एवं प्रभावी तरह से प्रस्तुत किया गया है लेकिन फिर भी कोई दोष हों तो हमें सूचित अवश्य करें क्योंकि हमारा परम उद्देश्य वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर वैदिक ज्ञान को कौशल विकास के माध्यम से जन-जन पहुँचाना है। अतः पाठ्य पुस्तकों की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए विद्वानों के समस्त सुझावों का स्वागत है।

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

प्राक्कथन

तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्॥ (भगवद्गीता 2.50)

योग भारतीय संस्कृति एवं जीवन पद्धति का अभिन्न अङ्ग है। वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों एवं पुराणों में योगविषयक अवधाराणाएँ प्रचुरता में पाई जाती है। योग को आयुर्वेद, धर्मशास्त्र, दर्शन एवं अध्यात्म को जोड़ने की एक कड़ी के रूप में देखा जा सकता है। यह हमारे ऋषि-मुनियों द्वारा प्रदत्त वह सर्वकल्याणमयी विधा है, जिसके अभ्यास एवं अनुसरण के द्वारा मानव समाज का समग्र विकास सम्भव है।

आज के इस आधुनिक युग में चारों ओर दूषित एवं कोलाहलपूर्ण वातावरण बना हुआ है, जहाँ हम पर्यावरण से शुद्ध प्राणवायु कम, वरन् फ़ैक्ट्रियों तथा वाहनों आदि से निकली विषैली गैसों को अधिक ग्रहण कर रहे हैं। शुद्ध, सात्विक एवं सुपाच्य भोजन का स्थान हानिकारक रसायनों द्वारा पक्व फल-सब्जियों, जंक फ़ूड तथा डिब्बाबन्द भोज्य पदार्थों ने ले लिया है। आज मनुष्य वैदिक तथा योगमय जीवनचर्या, व्यायाम, आहार-विहार-सदाचार जैसे परम् अनुकरणीय पथ को विस्मृत कर अनियमित जीवनशैली जैसे दिशाहीन मार्ग की ओर प्रवृत्त हो चुका है, जिसके कारणवश मनुष्य के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के साथ-साथ आध्यात्मिक प्रगति का ह्रास हो रहा है। इस प्रकार मानव जीवन एवं सम्पूर्ण पर्यावरण कलियुगी प्रभाव का ग्रास बना हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है। ऐसी विकट परिस्थितियों में, योगविद्या का आश्रय लेना हमारे शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्यलाभ तथा सामाजिक-आध्यात्मिक विकास का सर्वोत्तम साधन है।

यही कारण है कि विद्यार्थी जीवन में भी योगशिक्षा एवं योग के अभ्यासों की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका है। योगाभ्यासों का उद्देश्य विद्यार्थियों में पूर्ण शारीरिक स्वास्थ्य, अन्तःस्रावी ग्रंथियों एवं चयापचय प्रक्रियाओं, मानसिक एवं सांवेगिक स्थायित्व को सुचारु रूप से विकसित करना है, जिससे विद्यार्थी आत्मानुशासित **(अथ योगानुशासनम् - यो.सू.** 1.1) एवम् आत्मविश्वास से परिपूर्ण होकर जीवन की प्रत्येक परिस्थिति में सकारात्मक दृष्टिकोण को धारण कर सकें। साथ ही विद्यार्थियों में योगाभ्यासों के माध्यम से सृजनात्मकता का विकास कर किशोरावस्था में होने वाले भावनात्मक द्वन्द्व एवं तनाव प्रबंधन से सम्बन्धित कौशल-क्षमताओं को विकसित करना है। अत: विद्यार्थियों को योग

शिक्षण के साथ-साथ उनमें योग प्रशिक्षण प्रदान करने का कौशल विकसित करना भी अत्यावश्यक है, जिससे वे सम्पूर्ण मानव समाज एवं पर्यावरण को अपने योग प्रशिक्षण कौशल द्वारा लाभान्वित कर सकें। वर्तमान परिपेक्ष्य में योगविद्या से सम्पूर्ण विश्वपटल लाभान्वित हो रहा है। वहीं **'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020'** के अन्तर्गत **कौशल एवं उद्यमिता विकास तथा रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रमों** पर भी विशेष बल दिया गया है। अतः **महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान** (MSRVVP), **शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार** तथा **राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण परिषद** (NCVET), **कौशल विकास एवं उद्यमिता मंत्रालय, भारत सरकार** के अन्तर्गत संचालित **'योग प्रशिक्षण–सहायक (स्तर- 3.0)'** के माध्यम से विद्यार्थियों में योग प्रशिक्षण के कौशल को विकसित कर रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना एवं आत्मनिर्भर बनाना है।

प्रस्तुत पुस्तक के अन्तर्गत विद्यार्थियों को वैदिक संहिताओं, उपनिषदों एवं योग शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में उल्लेखित योग के मूल स्वरूप से परिचित कराने का प्रयास किया गया है, साथ ही विभिन्न योगशास्त्रों का परिचय, योग एवं व्यक्तित्व विकास, आयुर्वेदोक्त जीवनचर्या, भारतीय संस्कृति, संस्कार तथा पुरुषार्थचतुष्टय में योग की प्रासंगिकता जैसे सैद्वान्तिक विषयों को प्रतिपादित किया गया है। वहीं प्रायोगिक एवं व्यावहारिक पक्षों के अन्तर्गत विभिन्न योगासन, षट्कर्म एवं प्राणायाम अभ्यास, वैदिक सूक्त (पुरुष सूक्त), प्रज्ञाविवर्धन स्तोत्र पर ध्यान साधना के साथ श्रीमद्भगवद्गीता एवं योग सूत्र (समाधिपाद एवं साधनपाद) को कण्ठस्थीकरण हेतु सम्मिलित किया गया है। पाठकों से अनुरोध है कि पुस्तक से सम्बन्धित किसी संशोधन आदि की स्थिति में अपने अमूल्य सुझाव प्रेषित करें।

- अभिजीत राजपूत

विषयानुक्रमणिका

विषय		पृष्ठ संख्या
अध्याय – प्रथम	**योग ग्रन्थों का परिचय**	**1-8**
1.1	पतञ्जलि योगसूत्र	1-2
1.2	हठयोगप्रदीपिका	2-4
1.3	घेरण्डसंहिता	4-5
अध्याय – द्वितीय	**वैदिकवाङ्मय में योगविद्या**	**9-15**
2.1	वैदिकवाङ्मय में योगविद्या	9-10
2.2	वेदों में योग	10-11
2.3	उपनिषदों में योग	11-13
2.4	स्मृतियों में योग	13
अध्याय – तृतीय	**योग एवं शारीरिक शिक्षा**	**16-28**
3.1	शिक्षा से अभिप्राय	16-17
3.2	शारीरिक शिक्षा एवं व्यायाम	17-18
3.3	व्यायाम के लाभ	18
3.4	योग शिक्षा	18-19
3.5	योग की परिभाषा	19
3.6	सम्पूर्ण स्वास्थ्य की अवधारणा में योग शिक्षा का महत्व	19-20
3.7	शारीरिक शिक्षा के सन्दर्भ में योग शिक्षा का महत्त्व।	21
3.8	व्यक्तित्व का अर्थ एवं व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में अष्टांग योग शिक्षा का महत्त्व।	21-25
अध्याय – चतुर्थ	**भारतीय संस्कृति एवं संस्कार योग एवं शारीरिक शिक्षा**	**29-37**
4.1	षोडश संस्कार का परिचय	29
4.2	संस्कारों का उद्देश्य	30

4.3 वैदिक संस्कारों की प्राचीनता 30-31

4.4 संस्कार के प्रकार 31-34

4.5 पुरुषार्थचतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) से अभिप्राय एवं उनमें योगविद्या से सम्बन्धित विभिन्न शाखाओं की उपयोगिता 34-35

अध्याय – पंचम्योग के विभिन्न अभ्यास : भाग -2 38-71

5.1 योगाभ्यास तथा योगासन के अभ्यास हेतु सामान्य दिशा-निर्देश। 38-39

5.2 सूक्ष्म व्यायाम-अभ्यास- 39-43

5.3 सूर्यनमस्कार (बीज मन्त्र सहित) 44-49

5.4 योगासन 49-68

अध्याय – षष्ठ प्राणायाम एवं षट्कर्म अभ्यास 72-86

6.1 प्राणायाम – परिचय एवं परिभाषा 72

6.2 प्राणायाम का महत्त्व एवम् उपयोगिता 72-73

6.3 प्राणायाम के नियम 73

6.4 प्राणायाम अभ्यास 73-79

6.5 षट्कर्म – कपालभाति, त्राटक, अग्निसार 79-84

अध्याय – सप्तम्आयुर्वेदोक्त जीवनचर्या 87-99

7.1 परिचय 87-88

7.2 आहार 88-90

7.3 विरुद्ध आहार 90

7.4 विहार – दिनचर्या 90-95

7.5 सद्वृत्त (आचार, विचार, व्यवहार) 95-96

अध्याय – अष्टम्वेदोक्त ध्यान एवं मन्त्र अनुप्रयोग 100-111

8.1 परिचय 100

8.2 पुरुष सूक्त 100-104

8.3	प्रज्ञा विवर्धन स्तोत्र	104
8.4	योगसूत्र (समाधिपाद एवं साधनपाद)	104-110
सन्दर्भ ग्रन्थ		**112-113**

अध्याय – प्रथम

योग ग्रन्थों का परिचय

> **हम अध्ययन करेंगे-**

1.1 **पतञ्जलियोगसूत्र** -समाधिपाद, साधनपाद, विभूतिपाद, कैवल्यपाद

1.2 **हठयोगप्रदीपिका** -प्रथम उपदेश, द्वितीय उपदेश, तृतीय उपदेश चतुर्थ उपदेश

1.3 **घेरण्डसंहिता** -प्रथम उपदेश, द्वितीय उपदेश, तृतीय उपदेश, चतुर्थोपदेश, पञ्चमोपदेश, षष्ठोपदेश, सप्तमोपदेश

प्रिय विद्यार्थियों ! प्रस्तुत अध्याय के अन्तर्गत हम योगविषयक ग्रन्थों का विवेचन करेंगे।

1.1 पतञ्जलि योगसूत्र-

भारतीय दर्शन-परम्परा के षड्दर्शनों में से एक 'योगदर्शन' को भी माना है। महर्षिपातञ्जलकृत योगसूत्र में योग विषयक चिन्तन का अत्यन्त सरल, स्पष्ट, वैज्ञानिक एवं मनोविश्लेषणात्मक तथ्यों के आधार पर प्रतिपादन किया गया है। योगसूत्र को चार पाद (समाधिपाद - 51 सूत्र, साधनपाद - 55 सूत्र, विभूतिपाद - 55 सूत्र, कैवल्यपाद - 34 सूत्र) में विभाजित करके 195 सूत्रों में प्रस्तुत किया गया है।

- **समाधिपाद-**

इस अध्याय में 51 सूत्र हैं जिनमें योग की परिभाषा (लक्षण), उद्देश्य (फल), वृत्ति के प्रकार एवं परिचय, वृत्ति-निरोध के उपाय (अभ्यास एवं वैराग्य) सम्प्रज्ञात एवम् असम्प्रज्ञात समाधि, ईश्वर एवं ॐ कार (प्रणव) सबीज-निर्बीज समाधि आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है ।

- **साधनपाद-**

इसके अन्तर्गत 55 सूत्र आते हैं, जिनमें पञ्चक्लेश (जीवन के मूलभूत तनाव), क्लेश निवृत्ति के उपाय, क्रियायोग, अष्टाङ्गयोग पर चर्चा, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार (बहिर्मुखी अङ्ग) आदि का उल्लेख है ।

- **विभूतिपाद-**

इसमें 55 सूत्रों का समावेश है। सर्वप्रथम योग के तीन अन्तरङ्ग अङ्गों (धारणा, ध्यान, समाधि) का

वर्णन किया गया है। विभूति का अर्थ 'सिद्धियों' से लिया गया है। अतः इस पाद में विशेषतः योग से प्राप्त सिद्धियों का उल्लेख किया गया है ।

- **कैवल्यपाद-**

इसमें 34 सूत्रों का समावेश है जिनमें सिद्धि-प्राप्ति के साधन, कर्म, सभी वस्तुओं में निहित एकता (समत्वता) कैवल्य-अवस्था (योग) आदि विषयों का उल्लेख है।

1.2 हठयोगप्रदीपिका -

हठयोगप्रदीपिका, हठयोग से सम्बन्धित मुख्य ग्रन्थों में से एक है, जिसका रचनाकाल 14वीं शताब्दी के लगभग माना जाता है। हठयोगप्रदीपिका के रचयिता स्वामी स्वात्माराम थे ।

प्रायः 'हठ' शब्द से तात्पर्य अत्यन्त प्रयत्नशीलता, हठधर्मिता या नियमाग्रह से लिया जाता है । परन्तु 'हठयोग' का अर्थ इन विषयों से सर्वथा भिन्न है । सिद्धसिद्धान्तपद्धति के अनुसार -

हकार कीर्तितः सूर्यः ठकारश्चन्द्र उच्यते ।
सूर्यचन्द्रमसोर्योगात् हठयोगो निगद्यते ॥ - सिद्धसिद्धान्तपद्धति 1.69

'ह'- सूर्य-स्वर (पिङ्गला) एवं 'ठ' - चन्द्रस्वर (इडा) के मध्य सन्तुलन होने पर सुषुम्ना नाड़ी में प्राणगमन की स्थिति को हठयोग कहा गया है।

हठयोगप्रदीपिका मुख्य-रूप से चार उपदेशों में विभाजित है –

- **प्रथम उपदेश –**

सर्वप्रथम श्री आदिनाथ (शिव) को नमन करते हुए हठयोग-अभ्यास का प्रमुख उद्देश्य (राजयोग की प्राप्ति) बताया गया है । तत्पश्चात् नाथसम्प्रदाय के सिद्ध हठयोगियों की परम्परा का वर्णन किया है । हठयोग क्रियाओं के अभ्यास हेतु उपयुक्त स्थान 'मठिका' का उल्लेख करते हुए योग-मार्ग के साधक एवं बाधक तत्त्वों का वर्णन है। स्वामी स्वात्माराम ने योग साधना में बाधा उत्पन्न करने वाले छः (6) बाधक तत्त्वों का वर्णन किया है, जो इस प्रकार है-1. अत्याहार (अधिक भोजन करना), 2. प्रजल्प (अत्यधिक बोलना), 3. प्रयास (अत्यधिक परिश्रम करना), 4. नियमग्रह (नियम पालन में कठोरता), 5. जनसंग (अत्यधिक लोगों से सम्पर्क), 6. चंचलता (मन का स्थिर न होना)। साथ ही स्वामी स्वात्माराम द्वारा योग साधना में सहयोग करने वाले साधक तत्त्वों के भी **छः** (6) भेद बताये हैं- 1. उत्साह, 2. साहस, 3. धैर्य, 4. तत्त्व ज्ञान, 5. दृढ निश्चय, 6. जनसंग परित्याग। तत्पशात यम एवं नियम का वर्णन जिनकी

संख्या दश (10) कही गयी है। यम के अन्तर्गत – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, क्षमा, धृति, दया, आर्जवं, मिताहार, शौच कहे गये है तथा नियम के अन्तर्गत तप, सन्तोष, आस्तिक्यम्, दान, ईश्वर पूजन, सिद्धान्त श्रवण, लज्जा, मति, तप, हवन का उल्लेख किया गया है।

इसके उपरान्त हठाभ्यास के प्रथम अङ्ग 'आसन' को बताते हुए 15 आसनों का वर्णन किया गया, जो इस प्रकार है– स्वस्तिकासन, गोमुखासन, वीरासन, कूर्मासन, कुक्कुटासन, उत्तानकूर्मासन, धनुरासन, मत्स्येन्द्रासन, पश्चिमोत्तानासन, मयूरासन, शवासन, सिद्धासन, पद्मासन, सिंहासन, भद्रासन।

आसनों में सिद्धासन, पद्मासन, सिंहासन व भद्रासन को चार आसनों को प्रमुख श्रेणी में रखते हुए, सिद्धासन को सबसे श्रेष्ठ आसन बताया गया है ।

योगासनों पर चर्चा बाद मिताहार तथा योग साधक के पथ्य-अपथ्य आहार के बारे में चर्चा की गई है।

- **द्वितीय उपदेश -**

उपदेश के प्रारम्भ में आसन के अभ्यास के पश्चात् हठभ्यास के द्वितीय अङ्ग 'प्राणायाम' का वर्णन किया है एवं प्राणायाम-अभ्यास से पहले 'नाड़ीशोधन' की आवश्यकता बताई है, साथ ही अधिक कफ-प्रवृत्ति एवं स्थूलता की स्थिति में 'षट्क्रिया' (धौति, बस्ति, नेति, त्राटक, नौलि,कपालभाति) के अभ्यास का उल्लेख किया है । तत्पश्चात् प्राणायाम के आठ भेद (सूर्यभेदी, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्छा, प्लाविनी) का वर्णन कर हठसिद्धि के लक्षण बताए हैं ।

- **तृतीय उपदेश -**

इसके अन्तर्गत दश-मुद्राओं – 1. महामुद्रा, 2. महाबन्ध, 3. महावेध, 4. खेचरी, 5. उड्डीयान, 6. मूलबन्ध, 7. जालन्धर, 8. विपरीतकरणी, 9. वज्रौली, 10. शक्तिचालन का वर्णन कर उनके लाभों को विस्तारपूर्वक प्रकाशित किया है ।

- **चतुर्थ उपदेश -**

चतुर्थ उपदेश में मुख्यतः कुण्डलिनी-जागरण तथा उसके परिणाम, नादानुसन्धान एवं समाधि जैसे विषयों का निरूपण किया गया है ।

अतः स्पष्ट है कि हठयोगप्रदीपिका, योग-विषयक शास्त्रों का एक ऐसा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है जो केवल अध्यात्म-विषय पर ही चर्चा नहीं करता, परन्तु व्यवहारिक स्तर पर भी आसन, प्राणायाम, षट्कर्म

एवं मुद्राओं द्वारा शरीर के अनेक रोगों का विनाश कर पूर्ण निरोगी स्वास्थ्य की अवधारणा का प्रतिपादन भी करता है। अतः यह योगचिकित्सा (Therapeutic yoga) हेतु अति महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ सिद्ध होता है।

1.3 घेरण्डसंहिता -

घेरण्डसंहिता महर्षिघेरण्ड द्वारा रचित ग्रन्थ है जिसका रचनाकाल लगभग 17वीं शताब्दी माना जाता है। एक समय राजा चण्डकपालि ने लोक-कल्याणार्थ महर्षिघेरण्ड से योग विषय के बारे में उपदेश देने की प्रार्थना की -

घटस्थयोगं योगेश तत्त्वज्ञानस्य कारणम् ।

इदानीं श्रोतुमिच्छामि योगेश्वर वद प्रभो ॥ - घेरण्डसंहिता 1.2

हे योगेश्वर ! तत्त्वज्ञान का कारण जो घटस्थ योग (घट अर्थात् शरीर) है, वह कृपा कर मेरे लिए कहियें ।

तत्पश्चात् महर्षिघेरण्ड ने इस गुप्त-योगशिक्षा को राजा के लिए कहा । घेरण्ड संहिता में 350 श्लोकों का प्रतिपादन है, जिन्हें सात उपदेशों में विभाजित किया गया है, जिनमें योग के सात अंगो (**षट्कर्म, आसन, मुद्रा, प्रत्याहार, प्राणायाम, ध्यान, समाधि**) का वर्णन है । अतः इसे 'सप्ताङ्ग योग' के नाम से भी जाना जाता है । इन सात उपदेशों में वर्णित विषयों का वर्णन निम्नलिखित प्रकार है -

- **प्रथमोपदेश -** इसमें मुख्यतः षट्क्रिया (धौति, बस्ति, नेति, नौलि, त्राटक, कपालभाति) का वर्णन किया गया है, जिससे शरीर एवं मन के मल का शोधन होता एवं वे निर्मल होते है ।
- **द्वितीयोपदेश -** इसके अन्तर्गत योगासनों का विवरण मिलता है, जिनमें 32 योगासन मुख्य माने गए हैं। महर्षि घेरण्ड के अनुसार संसार में जितने भी जीव– जन्तु निवास करते हैं, उतने ही आसन की संख्या भी होती है । अतः चौरासी लाख (8400000) आसनों में से चौरासी (84) को ही श्रेष्ठ माना गया है । यहाँ पर महर्षि घेरण्ड के अनुसार उन चौरासी श्रेष्ठ आसनों में से भी बत्तीस (32) आसन अति विशिष्ट होते हैं । अतः घेरण्ड संहिता में कुल बत्तीस आसनों का वर्णन मिलता है। जिनके नाम इस प्रकार हैं -1.सिद्धासन, 2. पद्मासन, 3. भद्रासन, 4. मुक्तासन, 5. वज्रासन, 6. स्वस्तिकासन, 7. सिंहासन, 8. गोमुखासन, 9. वीरासन,10. धनुरासन, 11. मृतासन/ शवासन, 12. गुप्तासन, 13. मत्स्यासन, 14. मत्स्येन्द्रासन, 15. गोरक्षासन, 16. पश्चिमोत्तान आसन, 17. उत्कट आसन, 18.

संकट आसन, 19. मयूरासन, 20. कुक्कुटासन, 21. कूर्मासन, 22. उत्तानकूर्मासन, 23. मण्डुकासन, 24. उत्तान मण्डुकासन, 25. वृक्षासन, 26. गरुड़ासन, 27. वृषासन, 28. शलभासन, 29. मकरासन, 30. उष्ट्रासन, 31. भुजंगासन, 32. योगासन।

सिंहासन को सभी व्याधियों (रोगों) को समाप्त करने वाला आसन माना है ।

- **तृतीयोपदेश -** इसमें मुद्रा एवं बन्ध वर्णित हैं, जिनकी कुल संख्या 25 कही गयी है। मुद्रा एवं बन्ध का उल्लेख इस प्रकार है - इन पच्चीस मुद्राओं के नाम निम्न हैं – 1.महामुद्रा, 2. नभोमुद्रा, 3. उड्डियान बन्ध, 4. जालन्धर बन्ध, 5. मूलबन्ध, 6. महाबंध, 7. महाबेध मुद्रा, 8. खेचरी मुद्रा, 9. विपरीतकरणी मुद्रा, 10. योनि मुद्रा, 11. वज्रोली मुद्रा, 12. शक्तिचालिनी मुद्रा, 13. तड़ागी मुद्रा, 14. माण्डुकी मुद्रा, 15. शाम्भवी मुद्रा, 16. पार्थिवी धारणा, 17. आम्भसी धारणा, 18. आग्नेयी धारणा, 19. वायवीय धारणा, 20. आकाशी धारणा, 21. अश्विनी मुद्रा, 22. पाशिनी मुद्रा, 23. काकी मुद्रा, 24. मातङ्गी मुद्रा, 25. भुजङ्गिनी मुद्रा ।
- **चतुर्थोपदेश -** इसमें मुख्यतः प्रत्याहार आर्थात् ज्ञानेन्द्रियों को वश में करने के उपाय वर्णित हैं।
- **पञ्चमोपदेश -** इस उपदेश में प्रणायाम से पूर्व नाडीशोधन के अभ्यास की चर्चा करते हुए प्राणायाम के आठ प्रकार (सहित कुम्भक- सगर्भ तथा निगर्भ, 2. सूर्यभेदी, 3. उज्जायी, 4. शीतली, 5. भस्त्रिका, 6. भ्रामरी, 7. मूर्छा, 8. केवली) एवम् मिताहार, ग्राह्य तथा निषिद्ध आहार का वर्णन है ।
- **षष्ठोपदेश -** इसके अन्तर्गत ध्यान एवम् उनके प्रकार (स्थूलमय, सुक्ष्ममय, ज्योतिर्मय) वर्णित है।
- **सप्तमोपदेश -** इस उपदेश में मुख्यतः समाधि विषयक चर्चा की गई है ।

प्रश्नावली

प्रश्न 1) निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प का चयन करें -

1) निष्कामकर्म की अवधारणा, में योग की किस शारवा से सम्बन्धित है -

अ) भक्तियोग ब) ज्ञानयोग

स) कर्मयोग द) हठयोग

2) 'योगः कर्मसु कौशलम्' किस महान् ग्रन्थ में उल्लिखित है -

अ) भगवद्गीता ब) योगवाशिष्ठ

स) रामायण द) हठयोगप्रदीपिका

3) ईश्वर प्रणिधान योग की किस शाखा से सब जुडा है-

अ) राजयोग ब) भक्तियोग

स) मन्त्रयोग द) कर्मयोग

4) राजयोग के अन्तर्गत कितने योगाङ्ग निहित है –

अ) 7 ब) 8

स) 9 द) 10

5) हठयोग के अन्तर्गत 'ह'कार से क्या तात्पर्य बताया गया है-

अ) चन्द्र ब) सूर्य

स) पृथ्वी द) वायु

प्रश्न 2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1) रामचरितमानस में भक्ति के .... प्रकार कहे हुए है। (8/9)

2) ईश्वरप्राणिधान की अवधारणा .... से सम्बन्धित है । (कर्मयोग / भक्तियोग)

3) कर्मण्येवाधिकारस्ते मा .... कदाचन । (कर्मसु / फलेषु)

4) योगसूत्र के अनुसार .... अष्टाङ्ग योग का तृतीय अङ्ग है। (आसन/प्राणायाम)

5) योग शरीर एवं मन का .... है । (सामञ्जस्य / वियोग)

प्रश्न 3) सही जोड़ियाँ मिलाइए –

1)	ज्ञानयोग	अ) चन्द्र स्वर
2)	'ठ'कार	ब) मन का रक्षण करने वाला
3)	कर्मयोगी	स) अविद्या का नाश
4)	मन्त्र	द) भक्तियोग
5)	ईश्वरप्रणिधान	ई) निष्कामकर्म

प्रश्न 4) निम्नलिखित वाक्यों से सत्य/असत्य का चयन कीजिए -

1) अष्टाङ्ग योग में वार्णित योगाङ्ग 'नियम' के अन्तर्गत सात अङ्ग कहे गए है। (सत्य/असत्य)
2) हठयोग का मूल उद्देश्य राजयोग की प्राप्ति कहा गया है। (सत्य/असत्य)
3) योगसूत्र के अनुसार धारणा में निरन्तर स्थिर रहना ध्यान कहा गया है। (सत्य/असत्य)
4) ज्ञानयोग का मुख्य उद्देश्य अविद्या का आवरण हटाकर आत्मानुभूति कराना है। (सत्य/असत्य)
5) ओंकार के जप एवं चिन्तन से योगसाधना में आने वाले विघ्नों का नाश नहीं होता है। (सत्य/असत्य)

प्रश्न 5) अतिलघुत्तरीय प्रश्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए -

1) क्रियायोग की परिभाषा योगसूत्र के अनुसार लिखिए।
2) यम तथा नियम के अङ्गों को लिखिए।
3) अष्टाङ्ग योग में आसन हेतु प्रयुक्त सूत्र को लिखिए।
4) योग की विभिन्न शाखाओं के नाम लिखिए।
5) मन्त्रयोग से क्या तात्पर्य है?

प्रश्न 6) लघुत्तरीय प्रश्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1) नवधा भक्ति के सभी प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
2) अष्टाङ्ग योग के अन्तर्गत योगाङ्ग 'यम' को समझाते हुए यम के सभी अंगों की व्याख्या कीजिए।
3) भगवद्गीता में वर्णित कर्मयोग से सम्बन्धित कोई तीन श्लोक व्यख्या सहित लिखिए?
4) हठयोग से आप क्या समझते है? सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए।

5) अष्टाङ्ग योग में वर्णित ध्यान एवं समाधि के सूत्र सहित व्याख्या को लिखिए ।

प्रश्न 7) दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1) योगसूत्र में वर्णित अष्टाङ्ग योग का व्याख्यात्मक रूप से वर्णन कीजिए।

2) कर्मयोग को विस्तृत वर्णन करें।

3) भक्तियोग एवं नवधा भक्ति को समझाईए।

4) मन्त्रयोग का विस्तृत विवरण कीजिए।

5) ज्ञानयोग की अवधारणा का वर्णन करें।

परियोजना कार्य

❖ श्रीमद्भगवद्गीता में निहित ज्ञानयोग, कर्मयोग तथा भक्तियोग से सम्बन्धित विषयों का चिन्तन करें ।

❖ योग की विभिन्न शाखाओं का चार्ट तैयार करें।

अध्याय – द्वितीय

वैदिकवाङ्मय में योगविद्या

➢ **हम अध्ययन करेंगे-**

2.1 वैदिकवाङ्मय में योगविद्या

2.2 वेदों में योग

2.3 उपनिषदों में योग

2.4 स्मृतियों में योग

2.1 वैदिकवाङ्मय में योगविद्या

वेद सनातन-संस्कृति एवं ज्ञान-विज्ञान के मूलस्रोत हैं। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में वेदों का विशिष्ट स्थान है। मानव जीवन से सम्बन्धित समस्त प्रश्नों के समाधान एवं ब्रह्माण्ड का विशुद्ध ज्ञान वैदिकवाङ्मय में निहित है, ऐसी मान्यता सर्वविदित है। वेद सर्व सनातन-विद्याओं के आश्रय-स्थल हैं, जिनमें 'अध्यात्मविद्या' का प्रमुख स्थान है। अतः स्पष्ट है कि वेदों का योगविद्या से भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। सर्वज्ञानमयी वैदिक-संहिताओं का मूल आधार योग ही है। योगी पुरुष ही योग की उच्चतर स्थिति को प्राप्त कर वेदमन्त्रों में निहित गूढ तत्व को जान सकता है, अर्थात् गहन अर्थों से परिपूर्ण इन वेदमन्त्रों का मननरूप योग के द्वारा ही साक्षात्कार किया जा सकता है।

वेद एवं योग दोनों विषयों को एक-दूसरे से पृथक् नहीं देखा जा सकता है। वस्तुतः इन्हें एक-दूसरे के पूरक पक्ष कहना उचित होगा। इस विषय पर 'योगशिखोपनिषद्' में हिरण्यगर्भ से भगवान् शङ्कर ने इस प्रकार कहा -

योगहीनं कथं ज्ञानं मोक्षदं भवतीह भोः।
योगोऽपि ज्ञानहीनस्तु न क्षमो मोक्षकर्मणि ॥
तस्माज्ज्ञानं च योगं च मुमुक्षुर्दृढमभ्यसेत्।

योगरहित ज्ञान एवं ज्ञानरहित योग, कभी मोक्ष देने वाला नहीं होता। अतः ज्ञान और योग दोनों का ही मोक्ष के इच्छुक को दृढतापूर्वक अभ्यास करना चाहिए।

- योगशिखोपनिषद् 1.13-14

वेद यदि विशुद्ध ज्ञान है, तो योग उस ज्ञानप्राप्ति का साधन। अतः साध्य-साधनभाव के दृष्टिकोण से दोनों को प्राप्त करने हेतु सदा प्रवृत्त रहना चाहिए।

2.2 वेदों में योग

वेदों में योग के सन्दर्भ में 'ऋषिर्दर्शनात्', 'मन्त्रं मननात्' जैसे वाक्यों का उल्लेख मिलता है; जिनका आशय है - ऋषिरूप योगियों ने जो कुछ कहा है अथवा लिखा है, उसे अपनी मनन-शक्ति तथा योगदृष्टि से साक्षात् दर्शन (दृष्टिगोचर) करके लिखा है। ऐसे योगीरूप ऋषियों के सन्दर्भ में कहा गया है कि **'साक्षात्कृतधर्माण ऋषयः'** वे ऋषि हैं जिन्होंने योगदृष्टि से स्वधर्म का (स्वयं के विषय का) साक्षात्कार कर लिया। ऋग्वेद के मन्त्रों की व्याख्या करते हुए 'मन्त्रेभिः सत्ये' इस प्रकार कहा गया है, जिसका भावार्थ यह है कि ये मन्त्र साक्षात्-रूपेण योगदृष्टि के द्वारा चित्रों तथा आकृतियों के रूप में देखे गए तथा नाद के रूप में सुने गए। अतः सभी मन्त्र 'ऋत' अर्थात् पूर्ण सनातन एवं सत्य है। स्वयम् ऋग्वेद में 'मन्त्रेभिः सत्ये' इस प्रकार है जिसका आशय है - ये मन्त्र तो साक्षात् रूप में देखे गये विषयों के चित्रों को उपस्थित करते हैं। अतः वेद से भी पूर्व योगावतरण की स्थिति सिद्ध होती है।

योग-परम्परा में मान्यता है कि हिरण्यगर्भ ही योग के आदि प्रवक्ता हैं, अन्य कोई नहीं। वेदों में हिरण्यगर्भ के द्वारा ही सम्पूर्ण सृष्टि को उत्पत्ति मानी गई। इस सन्दर्भ में कहा गया है कि-

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।

सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व, हिरण्यगर्भ जो सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों का गर्भ अर्थात् उत्पत्तिस्थान है, वही सर्वप्रथम एवं सर्व जगत् के सनातन प्रादुर्भूत पति अर्थात् स्वामी हैं।

- ऋग्वेद 10.121.1; यजुर्वेद 13.4

'योगेषु एष महानिति प्रथमं कार्यम्' अर्थात् श्रीहिरण्यगर्भ की यही महान् इति है कि आपने वेदों से भी प्रथम योगविद्या का प्रादुर्भाव किया।

हिरण्यगर्भ से अग्नि, वायु, आदित्य एवम् अङ्गिरा चार, ऋषियों ने योग (समाधि) की उच्चावस्था में वेदमन्त्रों का साक्षात्कार कर सम्पूर्ण वैदिक- वाङ्मय की रचना की।

ऋग्वेद में योग के महत्त्व का वर्णन करते हुए कहा है कि योग के बिना विद्वान् का भी कोई यज्ञकर्म सिद्ध नहीं होता एवं समाधि, अणिमा आदि सिद्धियों एवं योग की प्राप्ति के लिए परमात्मा की प्रार्थना की है। *(सम्बन्धित श्लोकों के सन्दर्भ का अवलोकन करने हेतु अध्याय - 1 'योग का इतिहास' देखिए।)*

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः॥०

मनुष्य अपने मन को विषयों से हटाकर सभी विद्याओं के आश्रय परमेश्वर में स्थिर करें। यहाँ 'स्थिर' शब्द का भाव 'योग-स्थिति' से लिया जा सकता है।

- ऋग्वेद 5.81

युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्वाय सविता धियः।

अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्या अध्याभरत्॥

योग का अभ्यास करने वाले पुरुष, ज्ञानप्राप्ति के लिए जब परमात्मा में अपने चित्त (मन) को युक्त करते हैं, तब परमात्मा के ज्योर्तिमय प्रकाश को धारण करके परमात्मा में युक्त (लीन) हो जाते हैं।

- यजुर्वेद 11.1

अथर्ववेद में शरीरस्थ चक्रों पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि -

अष्टचक्रा नवद्वारा दवानां पुरयोध्या।

तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः॥

आठ चक्रों एवं नौ द्वारों से युक्त यह शरीर एक अपराजेय देवनगरी है। इसमें हिरण्यमय कोश है, जो ज्योति एवम् आनन्द से परिपूर्ण है। सम्भवतः यह भाव कुण्डलिनी योग-साधना को इङ्गित करता है।

- अथर्ववेद 10.1.31

2.3 उपनिषदों में योग

उपनिषदों का शाब्दिक अर्थ - उप + नि + षद् के रूप में लिया जा सकता है। 'उप' का अर्थ - समीप (परमात्मा/गुरु के समीप) 'नि' का अर्थ निश्चयपूर्वक तथा 'षद्' का अर्थ 'ब्रह्मज्ञान' से किया जा सकता है। अतः गुरु के समीप बैठकर निश्चयपूर्वक ज्ञान की प्राप्ति करना ही उपनिषद् है।

उपनिषदों पर वेदों की विचारधारा का प्रभाव पूर्णरूप से दृष्टिगोचर होता है। इन्हें 'वेदान्त' के नाम से भी जाना जाता है। उपनिषदों में विभिन्न स्थानों पर योगविद्या का उल्लेख पाया जाता है। कुछ उपनिषद् तो केवल योग विषय पर ही प्रतिपादित किए गए हैं। उपनिषदों में योगविद्या का उल्लेख इस प्रकार है-

योऽपानप्राणयोरैक्यं रजसो रेतसस्तथा।

सूर्याचन्द्रमसोर्योगो जीवात्मपरमात्मनोः॥

एवं हि द्वन्द्वजालस्य संयोगो योग उच्यते।

प्राणवायु का अपानवायु में संयोग, सूर्य स्वर (पिङ्गला) का चन्द्रस्वर (इड़ा) से संयोग तथा जीवात्मा का परमात्मा से संयोग ही योग कहा गया है।

- योगशिखोपनिषद् 68-69

तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ ॥

पञ्च इन्द्रियों, मन व बुद्धि की स्थिर अवस्था को योग कहते है। उस अवस्था को प्राप्त करने पर मनुष्य पूर्णत: दोषहीन हो जाता है।

- कठोपनिषद् 2.3.11

ध्यानस्य विस्मृतिः सम्यक् समाधिरभिधीयते॥

ध्यान में पूर्णत: विलीन हो जाना ही समाधि (योग) कहलाता है।

- त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद् 2.32

न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः ।

प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम् ॥

वह शरीर जो योगरूपी अग्नि में तप जाता है, उसे कोई व्याधि, जरा नहीं आती। ऐसा योगमय शरीर मृत्यु को भी प्राप्त नहीं होता।

- श्वेताश्वतर उपनिषद् 2.12

एकत्वं प्राणमनसोरिन्द्रियाणां तथैव च।

सर्वभावपरित्यागो योग इत्यभिधीयते॥

इन्द्रियों का विचारों एवं विषय-वृत्तियों से रहित होकर शुद्धभाव से मन (चित्त) एवं प्राण में एक हो जाना योग कहलाता है।

- मैत्रायणी-उपनिषद् 6.25

इस प्रकार उपनिषदों में योगविद्या का अनेक प्रकार से उल्लेख मिलते हैं। अमृतनादोपनिषद् में जहाँ योग के षडङ्गों पर चर्चा की है, वहीं त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद् में दस-दस यम एवं नियमों का उल्लेख मिलता है, परन्तु मूल-रूप से सभी योगविद्याओं का उद्देश्य आत्मतत्त्व का परमात्मा से संयोग करना ही बताया गया है।

2.4 स्मृतियों में योग

स्मृतियों का वैदिक-साहित्य में अपना वैशिष्ट्य है। स्मृतियों में योग का वर्णन इस प्रकार है -

सूक्ष्मतां चान्ववेक्षेत योगेन परमात्मनः॥

योग के माध्यम से परमात्मा की गूढ़ता (सूक्ष्मता) को जाना जा सकता है।

- मनुस्मृतिः 6.65

इन्द्रियाणां प्रसङ्गेन दोषमृच्छत्यसंशयम् ।

सन्नियम्य तु तान्येव ततः सिद्धिं नियच्छति ॥

मनुष्य इन्द्रियों के वशीभूत हो दु:खों एवं विकारों को प्राप्त होता है, परन्तु इन्द्रियों को संयमित करने से वह अनेक सिद्धियों को प्राप्त कर सकता है।

- मनुस्मृतिः 2.93

दह्यन्ते ध्यायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।

तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात् ॥

जिस प्रकार अग्नि में तपाने से सुवर्णादि धातुओं की अशुद्धियाँ नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार प्राणायाम-रूपी अग्नि में तपने से इन्द्रियों के विकार समाप्त हो जाते हैं। अतः यहाँ योगाभ्यास एवं प्राणायाम के महत्त्व को दर्शाया गया है।

- मनुस्मृतिः 6.71

वैदिकवाङ्मय में मानव जीवन के कल्याण हेतु योगविद्या का उल्लेख प्राप्त होता है। अतः स्पष्ट हो जाता है कि वेद में वर्णित योगविद्या का वेद से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

प्रश्नावली –

प्र.1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. अहिंसा की अवधारणा .... में प्रयुक्त है। (नियम / यम)
2. तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि .... । (क्रियायोगः / ध्यानयोगः)
3. ऋषियों ने वैदिक मन्त्रों का साक्षात्कार .... से किया । (योगदृष्टि / भौतिकदृष्टि)
4. .... योगस्य वक्ता नान्यः पुरातनः । (वशिष्ठः / हिरण्यगर्भः)
5. समाधिपाद में .... सूत्र निहित हैं। (34 / 51)
6. भगवान् शिव को .... कहा गया है। (योगेश्वर / योगीश्वर)
7. चित्तवृत्तियों के .... प्रकार एवं .... भेद होते हैं। (5, 2 / 4, 3)

प्र. 2. निम्नलिखित में से सत्य/असत्य लिखिए –

1. अष्टाङ्ग योग का उल्लेख योगसूत्र के विभूतिपाद में प्राप्त होता है। (सत्य/असत्य)
2. अहिंसा, यम का एक अङ्ग है। (सत्य/असत्य)
3. वेद विशुद्ध ज्ञान के स्रोत है। (सत्य/असत्य)
4. योगसूत्र की रचना महर्षि कपिल द्वारा की गई है। (सत्य/असत्य)
5. क्लेशों की संख्या पाँच कही गई है। (सत्य/असत्य)

प्र.3. सही जोड़ियाँ बनाइए -

1. तस्य वाचकः प्रणवः	अ) साधनपाद
2. ऋषिर्दर्शनात्	ब) न जरा न मृत्युः
3. विभूतिपाद	स) समाधिपाद
4. क्रियायोग	द) वेदमन्त्राः
5. योगाग्निमयं शरीरम्	य) 55 सूत्र

प्र.4. निम्नलिखित अतिलघु-उत्तरीय प्रश्नों का उत्तर दीजिए -

1. मनुस्मृति में योगविद्या से सम्बन्धित क्या उल्लेख प्राप्त होता है ?
2. अथर्ववेद में योगविद्या से सम्बन्धित क्या उल्लेख प्राप्त होता है ?
3. ऋग्वेद में योगविद्या से सम्बन्धित क्या उल्लेख प्राप्त होता है ?

4. साधनपाद में उल्लेखित ईश्वर की परिभाषा को लिखिए ?

5. चित्तवृत्तियों के नाम लिखिए ?

प्र.5. निम्नलिखित लघु-उत्तरीय प्रश्नों का उत्तर दीजिए -

1. यम एवं नियम को समझाते हुए यम-नियम के पाँचों अङ्गों के नाम लिखिए ?

2. योगसूत्रों की कुल सङ्ख्या बताते हुए चारों पादों में निहित सूत्रों की सङ्ख्या बताएँ ?

3. अष्टाङ्ग-योग के अनुसार आसनों का स्वरूप स्पष्ट कीजिए ?

प्र.4. निम्नलिखित दीर्घ-उत्तरीय प्रश्नों का उत्तर दीजिए -

1. वैदिकवाङ्मय में योगविद्या का परिचय देते हुए वेदों, उपनिषदों तथा स्मृतियों में योगविद्या हेतु मिलने वाले सन्दर्भों का वर्णन कीजिए ?

2. अष्टाङ्ग-योग का परिचय देते हुए योग के सभी अङ्गों का सङ्क्षिप्त वर्णन कीजिए ?

3. पतञ्जलियोगसूत्र का सङ्क्षिप्त परिचय दीजिए ?

परियोजना कार्य

❖ वेदाध्ययन के समय योगविद्या से सम्बन्धित प्रयुक्त मन्त्रों को पुस्तिका में लिखिए। सभी मित्रों एवं सहपाठियों से इस विषय पर चर्चा करें, ताकि चारों वेदों में निहित योगविद्या के मन्त्रों का ज्ञान हो सके। अब सभी मन्त्रों को लिखकर, 'वैदिकसंहिताओं में योगविद्या' नाम से एक रिपोर्ट तैयार करें।

❖ समाधिपाद एवं साधनपाद में प्रयुक्त मुख्य योगसूत्रों के अर्थों को योगदर्शन से तथा अपने गुरु के सान्निध्य में रहकर जानें।

अध्याय – तृतीय

योग एवं शारीरिक शिक्षा

➢ **हम अध्ययन करेंगे-**

3.1 **शिक्षा से अभिप्राय**

3.2 **शारीरिक शिक्षा एवं व्यायाम**

3.3 **व्यायाम के लाभ**

3.4 **योग शिक्षा**

3.5 **योग की परिभाषा**

3.6 **सम्पूर्ण स्वास्थ्य की अवधारणा में योग शिक्षा का महत्व**

3.7 **शारीरिक शिक्षा के सन्दर्भ में योग शिक्षा का महत्त्व।**

3.8 **व्यक्तित्व का अर्थ एवं व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में अष्टांग योग शिक्षा का महत्त्व।**

परिचय

प्रिय विद्यार्थियों! अभी तक हमने योग को विभिन्न दृष्टिकोणों से जाना, परन्तु शिक्षा के परिपेक्ष्य में योग तथा शारीरिक शिक्षा एवं नैतिक शिक्षा के परिपेक्ष्य में योग की महत्ता को जानना अभी शेष है। आइए! प्रस्तुत अध्याय में उक्त विषय का अध्ययन करें।

योग एवं नैतिक शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा के विषय में जानने से पूर्व हम शिक्षा का अर्थ एवं उसके लक्ष्यों को जानेंगे।

3.1 **शिक्षा से अभिप्राय –**

व्याकरण के छ अनुसार शिक्षा शब्द 'शिक्ष् शिक्षणे' धातु से 'टाप्' प्रत्यय करने पर 'शिक्षा' शब्द की व्युत्पत्ति होती है, जिसका अर्थ है- सीखना अथवा ज्ञानार्जन करना। 'शिक्ष्यते विद्योपादीयते ऽनयेति शिक्षा' अर्थात् जिस प्रणाली अथवा साधन के द्वारा मनुष्य ज्ञान का उपार्जन करता है, वह शिक्षा कहलाती है।

शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है शिक्षा की इस निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया में तीन घटक होते है - शिक्षक, शिक्षार्थी एवं शिक्षा में निहित सामग्री(contents)। इन्हीं घटकों के सम्मिलित

समुचित संयोजन होने पर अधिगम की प्रक्रीया निष्पादित होती है, जिसके द्वारा शिक्षार्थी को उस विधा से सम्बन्धित सम्पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति होती है एवं साथ ही शारीरिक, मानसिक भावनात्मक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक स्तर पर शिक्षार्थी का सर्वाङ्गीण विकास होता है। यही शिक्षा का मूल उद्देश्य है।

3.2 शारीरिक शिक्षा एवं व्यायाम –

हमारे प्राचीन आचार्यों एवं ऋषि-मुनियों ने स्वास्थ्य की प्राप्ति हेतु शारीरिक शिक्षा को भी महत्वपूर्ण माना था। शारीरिक स्वास्थ्य को स्वधर्म की सार्थकता हेतु आवश्यक कहा गया है। (शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्, कुमारसम्भवम्...)। परन्तु उनका उद्देश्य केवल शरीरिक स्वास्थ्य की प्राप्ति ही नहीं था, बल्कि शारीरिक शिक्षा के माध्यम से उन्हें शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक रूप से विकसित करना था।

मुण्डकोपनिषद् के अनुसार –

नयमात्मा बलहीनेन लभ्यः (मुण्डकोपनिषद् 2.3.4)

अर्थात्- बलहीन मनुष्य को आत्मतत्त्व की प्राप्ति नहीं होती। अतः शारीरिक शिक्षा एवं व्यायाम को भारतीय चिन्तन में महत्वपूर्ण बताया गया है। वह साधन जिसके द्वारा शरीर में श्रम एवं उत्पन्न हो, उसे व्यायास कहते है। चरक संहिता के अनुसार -

शरीरचेष्टा यथा चेष्टा स्थैर्यार्था बलवर्धिन देह व्यायाम संख्याता मात्राच्या तां समाचरेत् ॥

(चरक संहिता, सूत्रस्थान 7.39)

अर्थात् - जिन शारीरिक क्रियाओं के समुचित, मात्रावत् तथा नियमित रूप से अभ्यास करने पर शरीर में स्थिरता तथा बल का वर्द्धन होता है, उसे व्यायाम कहा जाता है।

Central Advisory Board of Physical Education and Recreation के अनुसार -

शारीरिक शिक्षा से तात्पर्य शारीरिक खेलों एवं व्यायाम के माध्यम से शिक्षा को प्राप्त करने की प्रक्रिया से है। यह शरीर ,मन एवं आत्मा में पूर्णता को प्राप्त हेतु विद्यार्थी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास है।

शिक्षा मन्त्रालय एवं National Planning of Physical Education and Recreation के अनुसार- शारीरिक शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक बच्चे को शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक रूप से

स्वस्थ बनाना है। साथ ही उनमें व्यक्तिगत (नैतिक) तथा सामाजिक गुणों का विकास भी करना है, जो उन्हें सदैव दूसरों (समाज) के साथ प्रसन्नतापूर्वक जीवनयापन करने में सहायक बनें।

3.3 व्यायाम के लाभ -

शरीरोपचयः कान्तिर्गात्राणां सुविभक्ता, दीप्ताग्नित्वमनालस्यं स्थिरत्वे लाघवं मृजा।

श्रमक्लमपिपासोष्णशीतादीनां सहिष्णुता, आरोग्यं चापि परमं व्यायामादुपजायते।

न चास्ति सदृशं तेन किंचित् स्थौल्यापकर्स्हर्णम्, न च व्यायामिनं मर्त्यमर्दयन्त्यरयो बलात्।

न चैन सहसाक्रम्य जरा समधिरोहति, स्थिरीभवति मांसं च व्यायामाभिरतस्य च।

व्यायामस्विन्नगात्रस्य पद्भयामुद्वतितस्य च। - सुश्रुतसंहिता चिकित्सास्थान (24.38-42)

अर्थात् - व्यायाम के अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर पुष्ट होता है, शरीर में कान्ति आती है, शरीर सुन्दर तथा सुगठित बनता है, पाचन अग्नि (जठराग्नि) में वृद्धि होती है, आलस्य का नाश होता है, स्थिरता (Stability) एवं शरीर में लाघव्य (Lightness) की अनुभव होती है,शरीर का शोधन होता है। श्रम, क्लम, पिपासा, उष्णता एवं शीत (इन्द्र) आदि को सहन करने का सामर्थ्य तथा उत्तम आरोग्य की प्राप्ति होती है।

स्थूलता को कम करने में व्यायाम के समान अन्य कोई साधन नहीं है। व्यायाम के अभ्यासी से शत्रु भी भयभीत रहते है एवं उसपर वृद्धावस्था का भी सहसा आक्रमण नहीं होता। व्यायामशील मनुष्य के शरीर की मांसपेशिया सदा सुगठित एवं बलशाली होती है।

3.4 योग शिक्षा -

प्रिय विद्यार्थियों! प्रस्तुत अध्याय बिन्दु में हम योग को शिक्षा के रूप में जानेंगे। जैसा कि हमने पूर्व चर्चाओं में जाना कि शिक्षा एक प्रणाली है, जिसके अन्तर्गत किसी एक विषय अथवा माध्यम के द्वारा विद्यार्थी ज्ञान का अर्जन करते है। अतः योग एवं यौगिक अभ्यासों के माध्यम से विद्यार्थीयों का सर्वाङ्गीण विकास करना ही योग शिक्षा कहलाती है, परन्तु योग शिक्षा के अन्तर्गत एक रोचक तथ्य जुड़ा हुआ है। वह तथ्य यह है कि योग शिक्षा की अधिगम प्रक्रिया में साधन एवं साध्य दोनों ही तत्त्व, स्वयं योग शिक्षा अथवा यौगिक प्रविधियाँ ही है। इस तथ्य का सम्यक् उदाहरण हमें योगवाशिष्ठ से प्राप्त होता है - **योगेन योगो ज्ञातव्यः योगाद् योगः प्रवर्तते।** (योगवाशिष्ठ)

अर्थात् - योग (विद्या) के द्वारा ही योग (स्थिति) की प्राप्ति होती है। योग (विद्या) के द्वारा ही योग (स्थिति) का विकास होता है।

अतः स्पष्ट है कि योग शिक्षा स्वयं ही साध्य (आत्मानुभूति, सर्वाङ्गिण विकास) है एवं साथ ही साधन (शिक्षा, यौगिक प्रविधियाँ) भी है।

प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष अपने आध्यात्म विषयक विशुद्ध एवं सनातन ज्ञान से सम्पूर्ण विश्व को लाभान्वित करता रहा है, जिसमें वेदों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। वेद सत्य एवं सनातन विधाओं के आश्रय स्थल हैं। वेद की इन्हीं विद्याओं में से एक 'योगविद्या' भी हैं, जिसका उद्देश्य मानव जाति को पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान कर मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक रूप से परिष्कृत करते हुए परमानन्द अर्थात् 'आत्मसाक्षात्कार रूपी कल्याण मार्ग की ओर प्रवृत्त करना हैं। प्राचीनकाल से ही योग विद्या गुरुकुलीय शिक्षा का अङ्ग रही है, जिसके आश्रय को प्राप्त कर मनुष्य ने सम्पूर्ण स्वास्थ्य से लाभान्वित होते हुए अपने जीवन को सार्थक सिद्ध किया है।

3.5 योग की परिभाषा -

सम्भवतः आधुनिक युग में जन साधारण, योग को केवल व्यायाम, आसन, प्राणायाम आदि क्रियाओं के रूप में ही देखते हैं परन्तु वास्तविकता में योग का क्षेत्र एवं स्वरूप इससे कहीं अधिक व्यापक है। 'योग' शब्द का अर्थ - जोड़ना / मिलना / एकत्र होना अथवा किन्ही दो या अधिक पक्षों में सामंजस्य होना है।

अतः उपरोक्त अर्थ से तात्पर्य "शरीर एवं मन के मध्य सामंजस्य एवं सन्तुलन से है।" अतः योग वह स्थिति है, जिसके द्वारा मनुष्य के शारीरिक एवं मानसिक पक्ष का एकात्म होता है एवं उसी एकात्म के परिणामस्वरूप मनुष्य का सर्वांगीण विकास होता है।

3.6 सम्पूर्ण स्वास्थ्य की अवधारणा में योग शिक्षा का महत्व –

3.6.1 सम्पूर्ण स्वास्थ्य से तात्पर्य -

स्वास्थ्य मनुष्य के जीवन का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अङ्ग है, जिसके बिना व्यक्ति किसी भी प्रकार के सुख एवं सुविधाओं का आनन्दपूर्वक भोग नहीं कर सकता। अतः कहा भी जाता है -'पहला सुख निरोगी काया'। आयुर्वेद की सुश्रुत संहिता में स्वास्थ्य की परिभाषा का वर्णन करते हुए कहा है कि-

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलः क्रियाः।

प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते ॥ सुश्रुत संहिता 15.4.1

जिस व्यक्ति के शरीर मे त्रिदोष (वात, कफ, पित्त) की स्थिति सन्तुलित हो, देहाग्नि तथा जठराग्नि समान हो, सभी धातुएँ (रस, रक्त, माँस, भेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र) सम्यक् अवस्था में हो, मल (स्वेद, केश, लोम आदि) समुचित हो तथा सभी शारीरिक क्रियाएँ सुचारू हों। इसी के साथ मन, इन्द्रियाँ तथा आत्मा प्रसन्न, निर्विकार एवं आनन्दित अवस्था में हो ऐसा व्यक्ति स्वस्थ कहा गया है।

उपरोक्त परिभाषा के आधार पर यह तथ्य स्पष्ट है कि केवल शारीरिक रूप से रोग रहित होना ही पूर्ण निरोगी नहीं होता, वरन् मन, आत्मा एवं इन्द्रियों की प्रसन्नचित अवस्था का समावेश होने पर ही सम्पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति सम्भव है। इसी तथ्य को इंगित करते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी स्वास्थ्य को इस प्रकार परिभाषित किया -

स्वास्थ्य से तात्पर्य केवल शरीर में रोगों की अनुपस्थिति से ही नहीं, बल्कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक रूप से आनन्दित निर्विकारता एवं निश्चलता से है।

- विश्व स्वास्थ्य संगठन

स्वास्थ्य की कामना करते हुए वेदों में भी इस प्रकार कहा गया है कि -

आयुर्धीन कल्पतां प्राणो न कल्प पर्योन कल्पतोत्रं पोन कल्पताम् पृष्ठ यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्।

उक्त मन्त्र में आरोग्य एवं दीर्घायु रहते हुए मनुष्य को लोकहित (यज्ञ) में लगे रहने की बात कही है एवं कल्पों तक उसके पञ्चप्राण, नेत्र एवं श्रोत्र (कान) आदि के बलयुक्त एवं स्वस्थ रहने की कामना की है।

जीवेम शरदः शतम् (अथर्ववेद 19.67.2)

हम सौ शरदों (वर्षों) तक जीवित रहे आदि मन्त्र वेदों में सम्पूर्ण स्वास्थ्य, दीर्घायु की कामना एवं अवधारणा के उदाहरण हैं। स्वास्थ्य की इन्ही अवधारणाओं को सिद्ध करने में यौगिक अभ्यासों की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

3.7 शारीरिक शिक्षा के सन्दर्भ में योग शिक्षा का महत्व –

स्वस्थ शब्द, दो शब्दों से मिलकर बना है। 'स्व' एवं 'स्थ' स्व का अर्थ है 'स्वयं' एवं 'स्थ' का तात्पर्य 'स्थित होने से लिया जा सकता है। अतः स्वयं में स्थित' होना ही स्वस्थ शब्द का अभिप्राय है। योगसूत्र में योग सिद्धि के फल का वर्णन करते हुए महर्षि पतञ्जलि ने कहा है कि -

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानाम् ॥ योगसूत्र 1.3

योग सिद्धि के पश्चात् आत्मा की स्वयं में अवस्थिति हो जाती है।

यह स्थिति मानवीय चेतना का सर्वांगीण विकास कहा जा सकता है। वहीं, यौगिक अभ्यास, जैसे- षट्कर्म, आसन, प्राणायाम, ध्यान, मुद्रा आदि विषयों से सम्बन्धित हठयोग ग्रंथ (हठयोगप्रदीपिका) में यौगिक क्रियाओं के सिद्ध हो जाने के परिणामों का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि-

बपुः कृशत्वं वदने प्रसन्नता नादस्फुटत्वं नयने सुनिर्मले ।

अरोगता बिन्दुजयोऽग्निदीपनं नाडीविशुद्धिर्हठसिद्धिलक्षणम् ॥

- हठयोगप्रदीपिका 2.78

शरीर में लाघव्य (हलकापन), मुखपर प्रसन्नता का भाव, स्वरों में सौष्ठव, नेत्रों में निर्मलता (तेजस्विता), आरोग्यता, बिन्दु (आज्ञाचक्र से स्त्रावित होने वाला स्त्राव) पर नियन्त्रण, जठराग्नि की प्रदीप्ति तथा नाड़ियों की निर्विकारता (विशुद्धता) ये सब सिद्धि के लक्षण है।

यहाँ तक हम स्पष्ट रूप से समझ सकते है कि योग शिक्षा में उल्लेखित विभिन्न हठ योग से सम्बन्धित अभ्यासों के द्वारा हम शरीर एवं मन को स्वस्थ्य बना सकते है, जो शारीरिक शिक्षा का उद्देश्य है। अतः शारीरिक शिक्षा के अन्तर्गत भी योग शिक्षा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है।

3.8 व्यक्तित्व का अर्थ तथा व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में अष्टाङ्ग योग शिक्षा का महत्त्व-

आधुनिक युग में मानव समाज असीम भौतिक सम्पदा एवं सुख-सुविधाओं से समृद्ध होते हुए भी घातक मानसिक तथा शारीरिक रोगों से ग्रस्त हैं। ऐसी स्थिति में मनुष्य को व्यावहारिक (प्रायौगिक) के साथ-साथ आध्यात्मिक सामंजस्य से युक्त 'योग' रूपी साधन की महती आवश्यकता है। योग चिकित्सा स्वयं में एक पूर्णमानक वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित चिकित्सा पद्धति है। हजारो वर्षों से आध्यात्मिक जगत के साथ साथ वैज्ञानिक परिपेक्ष्य में भी योगविद्या अस्तित्वमान रही है, जिसे अनेक वैज्ञानिक अन्वेषणों के आधार पर पूर्णतः सिद्ध किया गया है। योगदर्शन में वर्णित अष्टाङ्ग योग भी

वैज्ञानिक पक्ष पर आधारित सुव्यवस्थित विषय एवं सम्पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति का साधन कहा जा सकता है। यम एवं नियम- समुचित सामाजिक व्यवहार, आत्मसंयम तथा अनुशासन के लिए आसान एवं प्राणायाम- शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए, प्रत्याहार तथा धारणा एकाग्रता वृद्धि, संकल्पशक्ति या लक्ष्य प्राप्ति में सहायता के लिए, ध्यान एवं समाधि- पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

यम एवं नियम के सिद्धान्त वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है। किसी भी अङ्ग का पालन करने पर मनुष्य की ऊर्जा प्रकृति की ऊर्जा के सापेक्ष रहती है तथा उनके विरुद्ध कार्य करने पर प्रकृति की ऊर्जा के भी विरुद्ध हो जाती है। यही विरुद्ध कार्य व्यक्ति के भीतर रोगों की उत्पत्ति का कारण है, तथा प्रकृति के साथ सामञ्जस्य रखने वाले कार्य सम्पूर्ण स्वास्थ्य एवं आरोग्य प्राप्ति के साधन है। यम एवं नियम का अनुपालन अतिआवश्यक माना गया है क्योंकि यह शरीर में सूक्ष्म परमाणु स्तर पर होने वाली रासायनिक एवं जैविक प्रक्रियाओं को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। यम एवं नियम धर्म विज्ञान पर आधारित स्वास्थ्य के सिद्धान्त हैं, जो मनुष्य शरीर एवं मन के सभी पहलुओं तथा उनके अन्दर व्याप्त रासायनिक एवं विद्युत चुम्बकीय प्रणाली से जुड़े हैं। यम के माध्यम से व्यक्ति आत्मसंयमित होकर सामाजिक मूल्यों को सम्यक रूप से आत्मसात् करने में समर्थ हो पाता है। यम में वर्णित सत्य का पालन करने से ही मनुष्य की ऊर्जा सकारात्मकता से परिपूर्ण हो जाती है। प्राचीन ऋषि मुनि भी पूर्ण सत्यनिष्ठा से इस अङ्ग की साधना करते थे । झूठ बोलने से व्यक्ति के भीतर रासायनिक सन्तुलन बिगड़ जाते हैं तथा वह अनेक रोगों जैसे कब्ज, हृदय गति के विकार, विस्मृति आदि से पीड़ित हो जाता है। हिंसा, मांस- भक्षण, चोरी आदि करने पर शरीर में नकारात्मक हार्मोन्स का स्राव प्रारम्भ हो जाता है, जो पाचन संस्थान, तन्त्रिका तन्त्र एवं शरीर के प्रत्येक अणु, कोशिका एवं उत्तकों पर कुप्रभाव डालते हैं। ब्रह्मचर्य के पालन से छात्र सदैव विद्यार्जन हेतु पात्र बने रहते हैं तथा बल, तेज एवं ओज से परिपूर्ण होते हैं। वहीं इसके विरुद्ध कार्य करने पर अनेक अनेक दुःसाध्य रोगों के ग्रास बन सकते हैं। यम स्वयं में एक उच्चस्तरीय नैतिकशास्त्र है।

इसी प्रकार नियम भी सम्यक जीवनशैली का विज्ञान है। हमारी सभ्यता में स्वच्छता का सदा ही पालन किया गया है। शौच में सम्मिलित पटक्रिया एवं शास्त्रों के पठन द्वारा मानसिक शुद्धि इसके समुचित उदाहरण हैं। षट्कर्मों के अभ्यास से नेत्र, कण्ठकूप, श्वसन अङ्ग, उदर प्रदेश एवं आंतों की सफाई

होती है, मोटापा, उदर एवं श्वसन रोग, बात एवं कफजन्य रोगों से निवृत्ति होती है। वर्तमान परिपेक्ष में शौच का अत्यन्त महत्त्व है। अनेक विषाणु तथा जीवाणु जनित रोगों में यह विशेष लाभदायी अङ्ग है। सन्तोष के पालन से अवसाद, कैंसर आदि जैसे भयावह रोगों की सम्भावना कम होती है। वहीं, तप के माध्यम से शारीरिक, सांवेगिक तथा मानसिक स्वास्थ्य लाभ होता है। स्वाध्याय एवं ईश्वर प्रणिधान आत्मविश्लेषण तथा आध्यात्मिक प्रगति में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार यम एवं नियम के समुचित पालन के पश्चात् मनुष्य योगासनों के अभ्यासों हेतु पात्र बन पाता है।

यौगिक क्रियाओं जैसे आसन के अभ्यास से शरीर के सभी अङ्ग प्रत्यंगों की समुचित - मालिश होती है एवं रक्त परिसन्चरण बढ़ता है, जिससे शरीर में पुष्टता आती है। पाचन संस्थान, तन्त्रिका तन्त्र, स्नायु की कार्यप्रणाली, अन्तःस्रावी ग्रंथियों द्वारा हार्मोन का उत्सर्जन, मस्तिष्क आदि सभी सुव्यवस्थित सुचारू एवं संयोजित रूप से कार्य करते हैं, जिससे शारीरिक स्वास्थ्य लाभ की प्राप्ति होती है। वैज्ञानिक शोधों के द्वारा, आसनों के अभ्यास से जीवन की गुणवत्ता में अप्रत्याशित सुधार देखा गया है। जहरीले पदार्थों का निष्कासन, चयापचय प्रणाली की क्रियाशीलता में वृद्धि, नसों एवं मांसपेशियों के बीच अद्भुत समन्वय, रोग प्रतिरोधक प्रणाली का बेहतर होना, हृदय तथा अन्य सभी अङ्गों का स्वास्थ्यलाभ एवम शारीरिक क्रियाओं का समुचित क्रियान्वयन आदि पक्ष योगासनों के माध्यम से सिद्ध होते हैं।

प्राणायाम के माध्यम से प्राणों का नियमन, विस्तार एवं नियन्त्रण प्राप्त होता है, जिससे प्राणिक एवं भावनात्मक संवेगों के मध्य सामन्जस्य उत्पन्न होता है। श्वसन तन्त्र एवं फेफड़ो की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। साथ ही शारीरिक एवं मानसिक पक्ष के मध्य सामञ्जस्य स्थापित होता है। वैज्ञानिक एवं शोधकर्ताओं ने यह पाया कि सामान्य व्यक्ति लगभग 500 मिलीलीटर ऑक्सीजन ग्रहण करता है, परन्तु अनुलोम विलोम, भस्त्रिका आदि प्राणायामों के निरंतर अभ्यास करने वाले साधकों को चार से छह लीटर ऑक्सीजन ग्रहण करते हुए पाया गया। प्राणायाम के अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर में अथाह जीवनशक्ति का प्रवाह होता है, जिससे शरीर के सभी अङ्ग एवं मन तथा इन्द्रियाँ सकारात्मक रूप से प्रभावित होते हैं, बेहतर ऑक्सीजन आपूर्ति एवं रक्त कणिकाओं में वृद्धि होती है, निद्रा सुव्यवस्थित होती है एवं शरीर तथा मन को अद्भुत विश्रांति प्राप्त होती है।

प्राणायाम, सम्पूर्ण नाडीशास्त्र पर आधारित चिकित्सा विज्ञान है। नाडीशोधन प्राणायाम के अभ्यास से शरीर की सभी नसों तथा नाड़ियों में व्याप्त विषाक्त पदार्थों का निष्कासन हो जाता है, जिससे

सम्पूर्ण नाडीमण्डल, परिसञ्चरण तन्त्र एवं तन्त्रिका तन्त्र के प्रवाह मार्ग में अवरुद्ध मलों का शमन हो जाता है तथा उक्त संस्थानों की कार्यप्रणाली सुव्यवस्थित एवं सुचारू होती हैं। प्राणायाम के अभ्यास से शरीर मे व्याप्त सांवेगिक एवं विद्युत प्रवाह सुषुम्ना नाड़ी में गमन करने लगता है, जिससे शरीर मे उपस्थित चक्रों में ऊर्जा का सञ्चरण प्रारम्भ होने लग जाता है, जो मनुष्य की चेतना को उच्च स्तर तक परिष्कृत करता है।

प्राणायाम का अभ्यास करते-करते मन और इन्द्रियों का शुद्धिकरण हो जाता है। तब इन्द्रियों की बाह्य वृत्तियों को सब ओर से समेटकर मन में विलीन करने के अभ्यास को प्रत्याहार कहा जाता है। मन की असंयमितता के परिणामस्वरूप उत्पन्न मानसिक क्लेश, अवसाद, क्रोध, विस्मृति आदि समस्याओं के प्रयोग में लायी जाने वाली पाश्चात्य जगत प्रदत्त आधुनिक मनश्चिकित्सा की जो प्रविधियाँ प्रचलित हैं, उनमें मुख्यतः वैचारिक विश्लेषण, परामर्श तथा अन्य अन्तर्विक्षण प्रक्रियाओं के द्वारा रोग का इलाज किया जाता है। योगदर्शन एक सम्पूर्ण मनोविज्ञान है एवम प्रत्याहार का अभ्यास मन पर ही केन्द्रित है। आधुनिक मनश्चिकित्सा में प्रयोग की जाने वाली अनेक विधियाँ भी प्रत्याहार की विभिन्न क्रियाओं जैसे त्राटक, योगनिद्रा आदि का आधुनिकीकरण ही कही जा सकती हैं। अतः मानसिक स्वास्थ्य एवं आत्मविश्वास को विकसित करने में प्रत्याहार की अति विशिष्ट भूमिका है। धारणा के अभ्यास से स्मरण शक्ति, संकल्पशक्ति एवं एकाग्रता में वृद्धि होती है एवं मनुष्य का आभा मण्डल / चुम्बकीय क्षेत्र विस्तृत, स्वस्थ एवं सकारात्मक होता है।

ध्यान एवं मुद्रा के अभ्यासों से मस्तिष्क में अद्भुत क्षमताओं का विकास होता है। ध्यान के दौरान मस्तिष्क का संरचनाओं में सकारात्मक परिवर्तन देखे गए हैं। इन्हीं परिवर्तनों के साथ अल्फा तरंगों की उत्पत्ति दृष्टिगोचर हुई, जो बौद्धिक विकास तथा स्मृति में वृद्धि एवं रचनात्मक तथा सृजनात्मक क्षमताओं को भी विकसित करने में पूर्ण समर्थ है। ध्यान के अभ्यास से शरीर में नकारात्मक हार्मोन्स का स्तर कम पाया गया एवं वही सकारात्मक हार्मोन्स के स्तरों में वृद्धि देखी गई। योगनिद्रा का अभ्यास मस्तिष्क का भाग को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है, जो तनाव प्रबन्धन (स्ट्रेस मैनेजमेंट) के रूप अत्यन्त सहायक है।

इस प्रकार यौगिक अभ्यासों के माध्यम से शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य तो प्राप्त होता हैं, इसी के साथ आध्यात्मिक रूप से विकसित करने में भी यौगिक अभ्यासों की महती भूमिका है। समाधि के

माध्यम से व्यक्ति आत्मकेन्द्रित होता है। साथ ही समाज कल्याण हेतु परोपकारी एवं समाजोत्पादक कार्य करने की ओर प्रेरित होता है, 'वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को आत्मसात् करते हुए विश्व कल्याण में अपनी ओर से सहयोग प्रदान करता है। समाधि के द्वारा मनुष्य अपनी उच्चस्तरीय चेतना को प्राप्त कर ब्रह्माण्डीय चेतना से स्वयं का समन्वय कर लेता है। इस प्रकार योग के द्वारा मनुष्य अपने अन्तिम एवं प्रमुख ध्येय को प्राप्त करके पूर्ण स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता की अवस्था को प्राप्त कर सकता है।

प्रश्नावली

प्रश्न 1) निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनें-

1) विश्व योग दिवस कब मनाया जाता है -

अ) 5जून ब) 22 जून स) 21जून द) 18 जून

2) भारत में अन्तर्राष्ट्रीय योग महोत्सव का आयोजन किस मन्त्रालय द्वारा किया जाता है?

अ) आयुष मंत्रालय ब) संचार मंत्रालय

स) शिक्षा मंत्रालय द) इनमें से कोई नहीं

3) योग शब्द से तात्पर्य है –

अ) एकात्म ब) सामन्जस्य

स) समाधि द) उपर्युक्त सभी

4) शरीरस्थ धातुओं की संख्या है –

अ) चार ब) पाँच स) सात द) आठ

5) सम्पूर्ण स्वास्थ्य के घटकों की संख्या है –

अ) चार ब) छः

स) आठ द) दस

प्रश्न 2) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें -

1) श्वास का नियमन .... द्वारा किया जाता है। (नियम/प्राणायाम)

2) नयमात्मा ....लभ्यः। (अर्थहीनेन/बलहीनेन)

3) ....विद्योपादीयते ऽन्येति शिक्षा। (शिक्ष्यते/विद्यते)

4) जीवेम ....शतम्। (शरदः/हेमन्त:)

5) मनश्चिकित्सा में ....की अत्यन्त उपयोगिता है। (आसन/ध्यान)

प्रश्न 3 निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताईए –

1) कैंसर जैसी असाध्य बीमारियों में प्राणायाम उपयोगी है। (सत्य/असत्य)

2) ध्यान के दौरान हमारे मस्तिष्क में 'विद्युतचुम्बकीय' तरंगें उत्पन्न होती हैं। (सत्य/असत्य)

3) आसनों से शरीर में रक्त का संचार नियंत्रित होता है।(सत्य/असत्य)

4) शारीरिक शिक्षा हमारे सर्वांगीण विकास के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। (सत्य/असत्य)

5) योगसूत्र के अनुसार योग के पाँच अङ्ग है। (सत्य/असत्य)

प्रश्न 4) सही जोड़ी का मिलान करें -

1)	स्वास्थ्य	अ) तनाव प्रबंधन
2)	षट्कर्म	ब) चोरी न करना
3)	समाधि	स) शुद्धिकर्म
4)	योग निद्रा	द) आनन्द की प्राप्ति
5)	अस्तेय	ई) चार घटक

प्रश्न 5) अतिलघउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए -

1) वसुधैवकुटुम्बकम् का अर्थ समझाईए।

2) स्वास्थ्य के घटकों की संख्या तथा नामों का उल्लेख कीजिए ?

3) प्रत्याहार से क्या तात्पर्य है?

4) यम-नियम के सभी अंगों के नाम लिखिए?

5) प्राणायाम से होने वाले लाभों का उल्लेख कीजिए?

प्रश्न 6) लघुत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए -

1) नाड़ीशोधन प्राणायाम का महत्व लिखिए।

2) आसनों के लाभ बताइए।

3) ध्यान से होने वाले लाभों का वर्णन कीजिए।

4) शिक्षा के अर्थ को समझाते हुए उसके महत्व को समझाईए।

5) 'पहला सुख निरोगी काया'- वाक्य की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 7 दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए

1) शारीरिक शिक्षा के अर्थ को समझाते हुए व्यायाम के महत्त्व का वर्णन कीजिए।

2) हठयोग सिद्धि के लक्षण बताते हुए शारीरिक शिक्षा के सन्दर्भ में योग के महत्व को समझाईए।

3) आयुर्वेद एवं विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वास्थ्य की परिभाषा को समझाईए। 'समग्र स्वास्थ्य' के संदर्भ में योग' की विस्तार से व्याख्या करें।

परियोजना कार्य

- ❖ योगाभ्यासों के माध्यम से स्वयं में आए परिवर्तनों और अनुभवों को जानकर एक रिपोर्ट तैयार करें एवं सहपाठियों के साथ सम्बन्धित विषयों पर चर्चा करें।
- ❖ योग शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा के मध्य समानता तथा अन्तरों पर चर्चा करें।

अध्याय – चतुर्थ

भारतीय संस्कृति एवं संस्कार

योग एवं शारीरिक शिक्षा

➢ **हम अध्ययन करेंगे-**

4.1 षोडश संस्कार का परिचय

4.2 संस्कारों का उद्देश्य

4.3 वैदिक संस्कारों की प्राचीनता

4.4 संस्कार के प्रकार

4.5 पुरुषार्थचतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) से अभिप्राय एवं उनमें योगविद्या से सम्बन्धित विभिन्न शाखाओं की उपयोगिता

4.1 षोडश संस्कार का परिचय

'संस्कार' शब्द सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से 'धा प्रत्यय लगाने पर **सम्परिभ्यां करोतौ भूषणे** - पाणिनीय सूत्र से भूषण अर्थ में 'सुद' (स) आगम करने पर सिद्ध होता है। इसका अर्थ है- 'संस्करण', 'परिष्करण तथा शुद्धिकरण है। सम् उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से 'घञ्' प्रत्यय करने पर संस्कार शब्द निष्पन्न होता है।

जैमिनि सूत्रों में शबर के अनुसार **स भवति यस्मिञ्ज्ञाते पदार्थौ भवति योग्यः कस्यचिदर्थस्य'** अर्थात् संस्कार वह है जिसके करने से कोई व्यक्ति किसी कार्य को करने के योग्य हो जाता है। जै.सू. 3.1.3 वहीं तन्त्रवार्तिक की बात करे तो 'योग्यतां चादधानाः क्रियाः संस्कारा इत्युच्यन्ते, अर्थात् संस्कार वे क्रियाएँ हैं जो योग्यता प्रदान करती है।' व.ध.सू 4.1,4 गौ.ध.सू 8.8. संस्कार मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक उन्नति के लिए जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त विभिन्न अवस्थाओं के विकास के लिए भारतीय ऋषि मुनियों ने अपने वेदोक्त तप के अनुभव से पूर्व योजना का निर्माण किया था ताकि मनुष्य आध्यात्मिक, भौतिक एवं नैतिक उन्नति का उपभोग कर अपने जीवन को पवित्र और सदैव स्वस्थ रख सकें। **वैदिकः कर्माभिः प्रेत्य चेह च।** म.स्मृ.(2.26)

गार्नैहोंमैजति कर्म चौल मौजीनिबन्धनैः ।

बैजिक गार्भिक चैनो द्विजानामपमृज्यते ।।(म.स्मृ. 2.27)

4.2 **संस्कारों का उद्देश्य** – हमारे भारतीय संस्कारों का मूल उद्देश्य मानव जाति का नैतिक विकास करना है क्योंकि मानव शिक्षा तो प्राप्त कर लेता है लेकिन अपने नैतिक कर्तव्यों को भूलता जा रहा है।

आचार्य गौतम ने चालीस संस्कारों का वर्णन करने के उपरान्त मनुष्य के आठ गुणों की महता का व्याख्यान देते हैं यथा- दया, क्षमा, अनुसूया, शौच, शम, उचित व्यवहार, निरीहता, निर्लोभता, इनका वर्णन करते हुए निर्देश देते है कि जिस व्यक्ति ने चालीस संस्कारों का अवबोध तो किया है, परन्तु आठ आत्मगुणों का जिसमें अभाव है उनमें लोगों का संस्कार अवबोध कर्म निरर्थक जब तक वह अपने नैतिक कर्तव्यों का पालन नहीं करता हैं। अतः संस्कार, शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक शुद्धि का श्रेष्ठ मार्ग व आचार हैं। इन संस्कारों से मानव की बाह्याभ्यन्तर शुद्धि होती है जिससे वह समाज का श्रेष्ठ आचारवान नागरिक बनता है। अन्य उद्देश्य मानव जाति की आत्मिक उन्नति करना है, जिससे उसका बाह्य परिष्कार के साथ -साथ नैतिक आचाक का भी विकास हो सके। सविधि संस्कारों के अनुष्ठान से संस्कृत व्यक्ति में विलक्षण तथा अवर्णनीय गुणों का प्रादुर्भाव हो जाता है। जैसा कि वीर मित्रोदय में वर्णन है- यथा-

आत्मशरीरान्यतरनिष्ठो विहित क्रियाजन्योऽतिशय विशेषः संस्कारः । वी.मि. पृ. 191

कार्यः शरीरसंस्कारः पावनः प्रेत्यचेहच म. स्मृ. 2/26

4.3 **वैदिक संस्कारों की प्राचीनता-** संस्कारों के मूल स्रोत हमारे वेदों के गृह्यसूत्र हैं। यहाँ से यह प्रारम्भ होते हुए क्रमशः धर्मसूत्र, वेदांग आदि में भी विस्तृत वर्णन प्राप्त होता हैं।

पूर्वाचार्यों के द्वारा संस्कार शब्द का प्रयोग अनेक सन्दर्भों में प्राप्त होता है। यथा- मीमांसाशास्त्र में यज्ञ के अंगभूत पुरोडाश की शुद्धि के लिए संस्कार शब्द का प्रयोग दोषामार्जन कर पवित्रता के लिए प्रयुक्त होता है।

'प्रोक्षणादिजन्यसंस्कारो यज्ञाङ्गपुरोडाशेष्विति द्रव्यधर्मः।

(वाचसपत्यम्, भाग 5, पा.गृ.सू. पृ.14)

न्यायशास्त्र के आचार्य भावों को व्यक्त करने की आत्मव्यञ्जक शक्ति को ही संस्कार मानते हैं। उपर्युक्त साक्ष्यों से स्पष्ट होता है कि वैदिककाल से लेकर संस्कार शब्द शुद्धता का ही बोध कराता है। इस प्रकार गर्भाधान, पुसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म,

कर्णभेद उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास, अन्त्येष्टि आदि वेदोक्त योजना से संस्कार करने पर बालको के पैतृक अर्थात् आनुवंशिक रोग तथा आचरण सम्बन्धित संस्कार जन्य दोष दूर होकर वेदोक्त बालकों का सर्वाङ्गीण विकास होता हैं।

4.4 संस्कार के प्रकार - हारीत स्मृति के अनुसार दो प्रकार के संस्कार होते हैं 1. ब्राह्म 2. दैव। गर्भाधान आदि ब्राह्म संस्कार एवं सप्तपाकसंस्था आदि याग देव संस्कार हैं।

द्विविधो हि संस्कारों भवति ब्राह्मो दैवश्चेति।(सं.ग. पृसं .7)

स्मृतियों में यज्ञों का समावेश दैव संस्कारों के अन्तर्गत माना जाता है क्योंकि ये परोक्षरूप से पवित्र करने वाले संस्कार हैं और इनका मुख्य प्रयोजन देवों की आराधना है परन्तु संस्कारों का उद्देश्य व्यक्तित्व और जीवन को संस्कृत करना है। जैसा वीरमित्रोदय में वर्णन है-

पञ्चविंशतिर्संस्कारै संस्कृता ये द्विजातयः।

ते पवित्राश्च योग्याश्च श्राद्धादिषु नियोजिताः।।(संस्कारगणपतिः पृ.सं.9)

आचार्य अंगिरा ने 25 संस्कारों का वर्णन किया है यथा-

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो बलिरेव च।

जातकृत्यं नामकर्म निष्क्रमोऽन्नाषनं परम्।।

चौलकर्मोपनयनं तद्व्रतानाञ्चतुष्टयम्।

स्नानोद्वाही चाग्रयणमष्टकाच्च यथा तथा।।

श्रावण्यामाष्वयुज्याञ्च मार्गषीर्ष्याञ्च पार्वणम्।

उत्सर्गश्चाप्युपाकर्म महायज्ञाश्च नित्यशः।।

संस्कारा नियता ह्येते ब्राह्मणस्य विशेषतः।।

(संस्कारगणपतिः पृ.सं.7)

गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र, स्मृति ग्रन्थों के आधार हमें संस्कारों की संख्या भिन्न- भिन्न प्राप्त होती है यथा, मनु के अनुसार 13, गौतम के अनुसार 40, बृहस्पति के अनुसार 25 आदि । वर्तमान समाज में वेदव्यास के द्वार निर्दिष्ट 16 संस्कार प्रसिद्ध हैं।

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च।

नामक्रिया निष्क्रमोऽन्नप्राशनं वपनक्रिया।।

कर्णवेधो व्रतादेषो वेदारम्भक्रियाविधिः।

केशान्तः स्नानमुद्वाहो विवाहोऽग्निपरिग्रहः ।।

त्रेताग्निसङ्ग्रहश्चैव संस्काराः षोडशस्मृताः ।

(संस्कारगणपतिः पृ.सं.8)

इनके निर्णय के सन्दर्भ में महर्षि अंगिरा ने कहा है कि अपनी- अपनी शाखा के अनुसार अपने -अपने गृह्यसूत्र में वर्णित को संस्कारों को करना चाहिए जैसा कि बृहस्पति ने कहा है यथा-

स्वे स्वे गृहे यथा प्रोक्तास्तथा संस्कृतयोऽखिलाः ।

कर्तव्या भूतिकामेन नान्यथा भूतिमृच्छति।।

❖ **गर्भाधान संस्कार**-गर्भाधान संस्कार का उद्देश्य शिशु के जन्मजन्मान्तरों के दोषों को परिमार्जित कर सुसंस्कारों से सम्पन्न कर शिशु का सर्वाङ्गीण विकास करना है।

विभावरीः षोडश भामिनीनां ऋतूद्गमाद्या ऋतुकालमाहुः।

नाद्याश्चतस्रोऽत्र निषेकयोग्याः पराश्च युग्माः सुतदाः प्रशस्ताः।। (.मु.मा6.3.)

❖ **पुंसवन संस्कार-** माता के गर्भ की रक्षा हेतु साक्षात् ब्रह्मा ने निर्देश दिया है यथा-

मातुर्गर्भस्य रक्षायै चातुर्वर्ण्यष्वपीक्ष्यते ।

वक्ष्यमाणात्र रक्षा हि चतुर्मुखोदिताः ।। (मु.वि.7.2)

यह द्वितीय संस्कार है माता के गर्भाशय में जब भ्रूण गतिविधि करने लगे तब यह संस्कार दूसरे एवं तीसरे मास में करना चाहिए- **तृतीयस्य गर्भमासस्या··दिसदेशे पुंसवनस्य कालः(गो.गृ. द्वि. प्र. ष.क.) द्वितीये वा तृतीये वा मासि पुंसवनं भवेत्।व्यक्ते गर्भे भवेत् सीमन्तेन सहाथवा।। (निर्णयसिन्धु, प्रयोग पारिजात)** वही इस संस्कार के उद्देश्य की बात करें तो इसका उद्देश्य गर्भ को वीर्ययुक्त कर अन्य कुचेष्टाओं से रक्षाकर दीर्घायु पुत्र की कामना हेतु किया जाता है यथा- **उपनिषदि गर्भलम्भनं पुंसवनमलोभनं च ।।** (आ. गृ. सू. 1, पृ.35)

शुक्लपक्ष में हस्त एवं श्रवण नक्षत्र से चन्द्रमा युक्त हो प्रशस्त है यथा-

आयूयमाणपक्षे यदा पुंसनक्षत्रेण चन्द्रमा युक्तः स्यात् (आ.गृ.सू.2, पृ.सं.37)

❖ **सीमन्तोन्नयन संस्कार**- यह तृतीय संस्कार है। सीमन्तस्य उन्नयनम् उद्‌भावनम् इति सीमन्तोन्नयन्। शिर में पाँच सन्धियाँ होती हैं जिनको सीमन्त(माँग)कहते हैं, गर्भिणी के केशों को सजाने

को ही सीमन्तोन्नयन कहते हैं। अर्थात् इसका मुख्य उद्देश्य गर्भिणी की अमंगलकारी अदृश्य प्रभावों से रक्षा कर मानसिक शक्तियों का विकास करना है। **प्रथमगर्भे चतुर्थेमासि षष्ठेऽष्टमे वा (गो.गृ.द्वि. प्र. स.क..2) चतुर्थे गर्भमासे सीमन्तोन्नयनम्** (आ.गृ.सू.1)

बृहस्पति-

पूर्वपक्षः शुभः प्रोक्तः कृष्णश्चान्त्यत्रिकं विना।

चतुर्दशी चतुर्थी च शुक्लपक्षे शुभप्रदे।।

वशिष्ठ- **चतुर्थे सावने षष्ठे वाऽप्यथवाऽष्टमे।**

शास्त्रों में इस समय यात्रा नहीं करने का निर्देश है यथा-

चतुर्थे मासि षष्ठे वाऽप्यथवाऽष्टमे गर्भिणी यदा।

यात्रा नित्यं विवर्ज्या स्यादाषाढे तु विशेषतः।।

❖ **जातकर्म संस्कार**- यह चौथा संस्कार है। शिशु के निरोग,आयुर्वर्धन ,ग्रहदोषनिवारण और अरिष्टनिवृत्ति ,के लिए जातकर्म संस्कार का बहुत महत्त्व है। जैसा कि देव गुरु बृहस्पति वचन है -

अथातस्संप्रवक्ष्यामि जातकाले क्रियां शुभाम् ।

जातस्यारिष्टनाशाय नीरोगत्वाय सर्वदा ।।

दीर्घायुष्याय चास्यैव सर्वसम्पद्विवद्धये ।

जन्मन्यशुभयोगानां विनाशाय विशेषतः।। (मु.वि.9.1)

❖ **प्राग्जन्म संस्कार** - गर्भाधान, पुंसवन और सीमन्तोन्नयन।

❖ **बाल्यावस्था के संस्कार** - जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकरण, कर्णवेध।

❖ **शिक्षा सम्बन्धी संस्कार**- विद्यारम्भ, उपनयन, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन ।

❖ **विवाह संस्कार** - विवाह समारोह सोलह प्रकार के समारोहों में से एक है। समाज में विवाह समारोह का अत्यधिक महत्व है। इसके अलावा, यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि विवाह समारोह सभी अनुष्ठानों में सबसे महत्वपूर्ण है। विवाह संतान की कामना, प्रकृति के सुख और धार्मिक सिद्धांतों की प्राप्ति के लिए किया जाता है। अधिकांश गृह सूत्र विवाह अनुष्ठान से शुरू होते हैं , क्योंकि यह अनुष्ठान सभी गृह बलिदानों या अन्य अनुष्ठानों का केंद्र होता है।

❖ **अग्नि-अधानम् -** विवाह समारोह जैसे लाज-होम में जिस अग्नि में होम-बलि दी जाती है, उसे अवसत्य-अग्नि कहा जाता है। यह विवाह की अग्नि का भी नाम है। इस अनुष्ठान में अग्नि को खींचने, इकट्ठा करने और स्थापित करने का कार्य किया जाता है।

❖ **अन्त्येष्टि संस्कार-** यह अंतिम संस्कार है। यह वह अनुष्ठान है जो मनुष्य की मृत्यु के बाद किया जाता है। यहां ज्योतिष के अनुसार इस अनुष्ठान का कोई मुहूर्त नहीं है। मृत्यु के बाद व्यक्ति के सगे-संबंधी उसका अंतिम संस्कार इस आशा के साथ करते हैं कि अगले लोक में उसका कल्याण होगा या उसे सुख मिलेगा।

इस प्रकार आचार्यों ने इस प्रकार संस्कारों को विभाजित किया है।

4.5 पुरुषार्थचतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) से अभिप्राय एवं उनमें योगविद्या से सम्बन्धित विभिन्न शाखाओं की उपयोगिता:

❖ **पुरुषार्थचतुष्टय का अभिप्राय:**

"पुरुषार्थ" का अर्थ है मनुष्य के जीवन के उद्देश्य या लक्ष्य, और "चतुष्टय" का अर्थ है चार। भारतीय दर्शन में चार पुरुषार्थ बताए गए हैं, जो एक संतुलित एवं समग्र जीवन के मार्गदर्शक हैं:

1. **धर्म** – नैतिकता, कर्तव्य और धार्मिक कर्तव्यों का पालन।
2. **अर्थ** – जीवन के लिए आवश्यक धन, संसाधन और सुरक्षा।
3. **काम** – भौतिकता जीवन के सुख (Materialism), प्रेम, सौंदर्य एवं भावनात्मक पक्ष।
4. **मोक्ष** – आत्मा की मुक्ति, जन्म-मरण के चक्र से निवृत्ति।

इन चारों का संतुलन ही एक समग्र, संतुलित एवं पूर्ण जीवन की कुंजी माना गया है

❖ **योगविद्या और पुरुषार्थों में उसकी उपयोगिता:**

योग केवल शरीर या ध्यान की क्रिया नहीं, बल्कि एक सम्पूर्ण जीवन-पद्धति है जो व्यक्ति को अपने भीतर और बाह्य जीवन में संतुलन प्रदान करती है। योग की विभिन्न शाखाएँ पुरुषार्थचतुष्टय को प्राप्त करने में सहायक हैं:

1. धर्म और योग:

- **राजयोग**, **कर्मयोग** और **भक्तियोग** व्यक्ति को अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए निष्ठा और समर्पण की भावना सिखाते हैं।

- योग से व्यक्ति के भीतर **आत्मसंयम, सत्य, अहिंसा** जैसी नैतिक प्रवृत्तियाँ विकसित होती हैं।
- **यम-नियम** (पतंजलि योगसूत्र) व्यक्ति को धार्मिक और नैतिक जीवन जीने का आधार प्रदान करते हैं।

2. अर्थ और योग:

- योग मन की एकाग्रता और चित्त की शुद्धता बढ़ाकर **कार्य दक्षता, निर्णय क्षमता**, और **धनार्जन में विवेक** प्रदान करता है।
- **ध्यान, प्राणायाम** और **आसन** से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य उत्तम रहता है, जिससे कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।
- व्यक्ति लोभ से ऊपर उठकर अर्थ का सही उपयोग करना सीखता है।

3. कामनाएँ और योग:

- योग कामनाओं पर नियंत्रण देना नहीं, बल्कि उन्हें **शुद्ध** और **संयमित** करना सिखाता है।
- **हठयोग** और **भक्तियोग** के माध्यम से व्यक्ति प्रेम, सौंदर्य, और सम्बन्धों में संतुलन और मर्यादा स्थापित करता है।
- काम का अर्थ केवल भौतिक सौन्दर्य नहीं, बल्कि **रचनात्मकता, कला, सौंदर्यबोध** आदि का विकास भी है – इसमें योग बहुत सहायक होता है।

4. मोक्ष और योग:

- **ज्ञानयोग, राजयोग**, और **ध्यानयोग** मोक्ष प्राप्ति के प्रमुख साधन हैं।
- योग साधना आत्मा और परमात्मा के मिलन का मार्ग है।
- चित्तवृत्तियों का निरोध कर व्यक्ति अंतर्मुखी होता है और आत्मबोध की ओर अग्रसर होता है।
- मोक्ष का मार्ग संयम, ध्यान और आत्मज्ञान से होकर जाता है, जो योगविद्या के प्रमुख अंग हैं।

निष्कर्ष- पुरुषार्थचतुष्टय जीवन के चार स्तंभ हैं, और **योगविद्या** वह कुंजी है, जो इन चारों को संतुलित रूप में प्राप्त करने में सहायक बनती है। योग केवल मुक्ति का मार्ग ही नहीं, बल्कि धर्म, अर्थ और काम को भी संतुलित व संयमित बनाकर मोक्ष की ओर अग्रसर करता है। अतः योग एक सार्वभौमिक और समग्र जीवन-पद्धति है, जो जीवन के सभी आयामों को समरस करता है।

प्रश्नावली

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. संस्कार शब्द सम् उपसर्ग और ___ धातु से बना है।
2. वैदिक संस्कारों की संख्या वर्तमान में सामान्यतः ___ मानी जाती है।
3. ___ संस्कार का उद्देश्य दीर्घायु संतान की कामना करना है।
4. पुरुषार्थचतुष्टय में अंतिम पुरुषार्थ ___ है।
5. योगविद्या के यम-नियम ___ और नैतिक जीवन का आधार बनाते हैं।

2. सही जोडियाँ मिलाइए

	स्तम्भ अ	स्तम्भ ब
1.	गर्भाधान संस्कार	अ. अंतिम संस्कार
2.	सीमन्तोन्नयन संस्कार	ब. मानसिक शक्तियों की रक्षा
3.	अन्त्येष्टि संस्कार	स. शिशु के जन्म के दोषों का परिमार्जन
4.	मोक्ष	द. आत्मा की मुक्ति
5.	अर्थ	ई. धन एवं संसाधन

3. सत्य/असत्य लिखिए -

1. संस्कार केवल शारीरिक शुद्धि के लिए होते हैं। (सत्य/असत्य)
2. उपनयन संस्कार शिक्षा का आरंभिक संस्कार होता है।(सत्य/असत्य)
3. योग का धर्म से कोई संबंध नहीं है। (सत्य/असत्य)
4. वैदिक संस्कारों का उल्लेख गृह्यसूत्रों में मिलता है। (सत्य/असत्य)
5. विवाह संस्कार सभी अनुष्ठानों का केन्द्र होता है। (सत्य/असत्य)

4. अति लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. 'संस्कार' शब्द किस धातु से बना है?
2. वैदिक काल में संस्कारों के मूल स्रोत क्या हैं?
3. पुंसवन संस्कार किस समय किया जाता है?
4. पुरुषार्थचतुष्टय में चार पुरुषार्थ कौन-कौन से हैं?

5. अन्त्येष्टि संस्कार कब किया जाता है?

5. लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. संस्कारों का उद्देश्य क्या है?
2. सीमन्तोन्नयन संस्कार किसलिए किया जाता है?
3. योगविद्या धर्म के पालन में कैसे सहायक है?
4. शिक्षा से संबंधित कौन-कौन से संस्कार हैं?
5. वैदिक संस्कारों की संख्या विभिन्न ग्रंथों में कैसे भिन्न-भिन्न बताई गई है?

6. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. षोडश संस्कारों का परिचय दीजिए एवं उनके उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
2. वैदिक संस्कारों की प्राचीनता पर प्रकाश डालिए।
3. पुरुषार्थचतुष्टय क्या है? योगविद्या के माध्यम से इनकी पूर्ति कैसे होती है?
4. संस्कारों के प्रकारों का वर्णन कीजिए एवं ब्राह्म तथा दैव संस्कारों में अंतर स्पष्ट कीजिए।
5. विवाह संस्कार की महत्ता पर विस्तार से प्रकाश डालिए।

❖ **परियोजना कार्य**

- अपने घर, मोहल्ले या विद्यालय के 5-10 लोगों से यह जानें कि उन्होंने अपने जीवन में कौन-कौन से संस्कारों को अपनाया है।
- उनके अनुभव, महत्व और व्यवहार में आए परिवर्तन को नोट करें।
- एक रिपोर्ट तैयार करें जिसमें संस्कारों की भूमिका, वर्तमान समाज में उनकी प्रासंगिकता और योगविद्या से उनका संबंध लिखा हो।
- इस रिपोर्ट को 500 शब्दों में लिखें और चित्रों या उदाहरणों से सजाएँ।

अध्याय – पंचम्

योग के विभिन्न अभ्यास : भाग -2

> **हम अध्ययन करेंगे-**
>
> 5.1 **योगाभ्यास तथा योगासन के अभ्यास हेतु सामान्य दिशा-निर्देश।**
>
> **5.2 सूक्ष्म व्यायाम-अभ्यास-**
>
> ❖ नेत्र एवं ग्रीवा (गर्दन), स्कन्ध (कन्धा), कटि (कमर), घुटने एवं पैर।
>
> **5.3 सूर्यनमस्कार (बीज मन्त्र सहित)-**
>
> **5.4 योगासन -**
>
> - उत्कटासन, गरुड़ासन, स्वस्तिकासन, सिंहासन, मण्डुकासन, गोमुखासन, उष्ट्रासन, शशांकासन, भुजंगासन, शलभासन, मकरासन आदि।

5.1 योगाभ्यास तथा योगासन के अभ्यास हेतु सामान्य दिशा-निर्देश -

- सदा स्वच्छ एवं पवित्र वातावरण में ही योगाभ्यास करें।
- दरी, आसन, बिछावन (Mat) इत्यादि पर ही योगाभ्यास करें तथा आरामदायक एवं ढीले वस्त्रों को ही पहनें।
- योगाभ्यासों को नित्य शौच से निवृत्त होकर एवं खाली पेट ही करें।
- योग के अभ्यासों को मङ्गलाचरण एवं प्रार्थना के पश्चात् ही प्रारम्भ करना चाहिए। अभ्यासों के लिए मन का शान्त एवं सात्त्विक होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रार्थना के माध्यम से मन एवं शरीर में सकारात्मकता का सञ्चार होता है।
- योगासनों से पूर्व सूक्ष्म व्यायाम का जरूर अभ्यास करें।
- योगासनों को करते समय यथासम्भव अपने अङ्गों को मोड़ें एवं तनाव देवें। सामर्थ्य से ज्यादा किसी भी आसन में शरीर को तनाव न होने दें, अन्यथा पीड़ा हो सकती है। अतः प्रतिस्पर्द्धा में न लगते हुए सामर्थ्यानुसार योगासनों का अभ्यास करें।
- योगाभ्यासों के दौरान कभी भी थकान महसूस होने पर शवासन अथवा विराम लिया जा सकता है।
- योगाभ्यासों के पूर्व ऋतु के अनुसार शीतल अथवा उष्ण जल से नहाना चाहिए।

- योगाभ्यास के साथ-साथ यम एवं नियम का विशेषरूप से पालन करें। साथ ही हल्का, सुपाच्य, ताजा और सात्त्विक आहार ही लेवें।
- योगाभ्यास सदा गुरु के सान्निध्य में ही करें एवं कोई भी रोग या व्याधि हो, तो उसकी जानकारी गुरु को अवश्य देवें।
- योगाभ्यासों में श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य रखें। केवल तभी श्वास-प्रश्वास में विशेष-रूप से परिवर्तन करें जब आसन एवं प्राणायाम के अभ्यास के दौरान निर्देशित किया जाए।
- विद्यालय के पश्चात् घर पर भी सिखाए गए अभ्यासों को करें।
- योग व्यायाम के अभ्यास ही नहीं, वरन् चरित्र-निर्माण के अभ्यास हैं। अतः सदा नैतिक मूल्यों का पालन करें।

5.2 सूक्ष्म व्यायाम अभ्यास

आसनों के अभ्यास से पूर्व सूक्ष्म व्यायाम के अभ्यास से शरीर में ऊष्मा एवं सूक्ष्म सञ्चरण का प्रवाह उत्पन्न होता है, जिससे आसनों के अभ्यास के दौरान किसी प्रकार की चोट-मोच या हानि की सम्भावना ना बन पाए ।

प्रस्तुत पाठ्यपुस्तिका में क्रमशः ग्रीवा, स्कन्ध, कटि एवं घुटनों से सम्बन्धित सूक्ष्म व्यायाम का विवरण दिया गया है, जिससे सभी अङ्ग-प्रत्यङ्गों में लचीलापन तथा योगासनों के अभ्यास हेतु क्षमता का विकास हो सके।

- **ग्रीवा के सूक्ष्म व्यायाम -**

प्रथम अभ्यास (आगे से पीछे की ओर झुकना) –

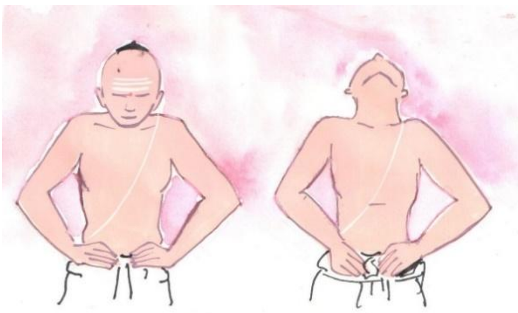

1. पैरों को कन्धों की सीध में रखते हुए सीधे खड़े हो जाएँ।
2. अभ्यास के दौरान हाथों को कमर पर रखें एवं श्वास को बाहर छोड़ते हुए सिर को धीरे-धीरे आगे की ओर झुकाएँ । ठोड़ी को वक्षःस्थल (छाती) पर स्पर्श कराने का प्रयास करें।
3. श्वास को अन्दर लेते हुए सिर को जितना पीछे हो सके, उतना ले जाएँ। इस विधि को दोनों ओर से 5 बार दोहराएँ।

द्वितीय अभ्यास (दायीं एवं बायीं ओर झुकना) -

1. श्वास को बाहर छोड़ते हुए सिर को धीरे-धीरे दायीं ओर झुकाएँ एवं कानों को कन्धों के यथासम्भव समीप लाने का प्रयास करें। इस बात का ध्यान रखें कि कन्धे ऊपर की ओर अधिक नहीं उठे होने चाहिए।

2. श्वास लेते हुए सिर को पुनः सामान्य-स्थिति में लाएँ। इसी प्रकार श्वास को बाहर छोड़ते हुए सिर को दाईं तरफ झुकाएँ एवं पुनः श्वास लेते हुए सिर को सामान्य-स्थिति में लेकर आएँ।
3. यह एक चक्र पूर्ण हुआ। इस विधि को 5 बार दोहराएँ।

तृतीय अभ्यास (दाएँ से बाएँ घुमाना) -

1. सिर को सीधा रखें एवं हाथों को कमर पर रखें।
2. श्वास को छोड़ते हुए सिर को धीरे-धीरे दायीं ओर घुमाएँ।
3. श्वास को अन्दर लेते हुए सिर को सामान्य स्थिति में ले आएँ। इसी प्रकार श्वास को बाहर छोड़ते हुए सिर को बाएँ ओर घुमाएँ एवं पुनः श्वास लेते हुए सिर को सामान्य स्थिति में लाएँ।

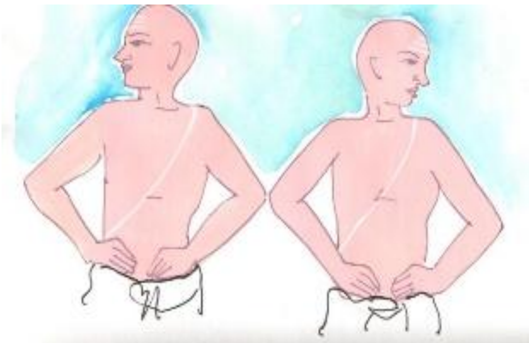

4. यह एक चक्र पूर्ण हुआ; इस विधि को 5 बार दोहराएँ।

चतुर्थ अभ्यास (ग्रीवा को घुमाना) -

1. श्वास छोड़ते हुए सिर को आगे की ओर झुकाएँ और ठोडी को सीने से स्पर्श कराने का प्रयास करें ।
2. श्वास लेते हुए सिर को धीरे-धीरे घड़ी की सुई की दिशा में गोलाकार घुमाएँ। तथा वापस लाते समय श्वास को बाहर छोड़ें ।

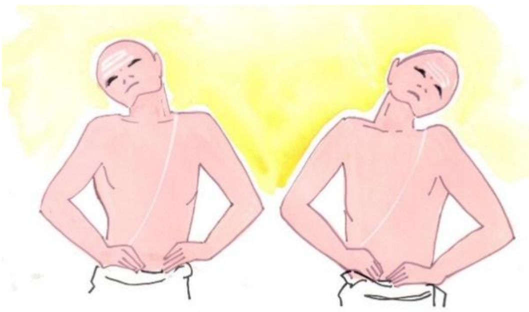

3. श्वास लेते हुए गर्दन पीछे ले जाएँ और श्वास को छोड़ते समय पुनः ले आएँ ।

4. इस प्रकार ग्रीवा एक बार पूरी तरह से घुमाएँ तत्पश्चात् ग्रीवा को घड़ी की विपरीत-दिशा में घुमाएँ।

5. यह एक चक्र पूर्ण हुआ। इस विधि को पाँच बार दोहराएँ।

सावधानी -

- ग्रीवा को जितना सम्भव हो उतना ही घुमाएँ। अधिक खिंचाव एवं तनाव उत्पन्न ना करें। कन्धों, गर्दन को शिथिल एवं स्थिर रखना चाहिए।
- ग्रीवा के आस-पास हो रहे मांसपेशियों के खिंचाव को अनुभव करना चाहिए।

➢ **स्कन्ध के सूक्ष्म व्यायाम**

प्रथम अभ्यास (स्कन्ध खिंचाव) -

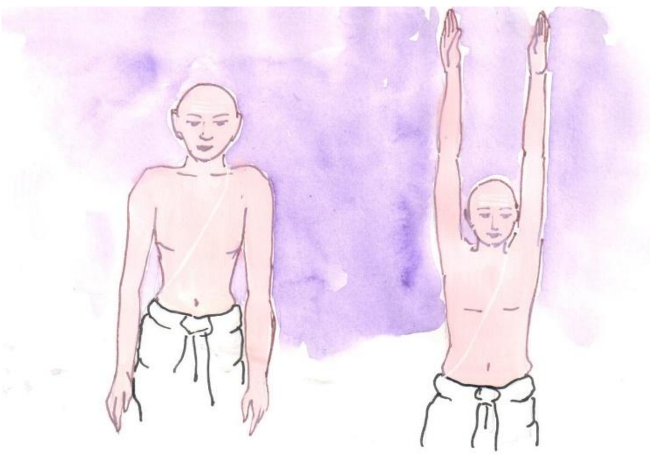

1. दोनों पैरों को मिलाएँ। शरीर को सीधा रखते हुए खड़े रहें।
2. दोनों भुजाओं को सिर के ऊपर उठाते हुए हथेलियाँ ऊपर की दिशा में रखें। इसी क्रिया को नीचे की ओर भी दोहराएँ।
3. जब हाथ को सिर से ऊपर ले जाएँ तो वे सिर से स्पर्श ना करें, उसी प्रकार जब हाथ को नीचे की ओर ले जाएँ तब जङ्घाओं से स्पर्श ना करें।
4. हाथों को ऊपर ले जाते हुए श्वास लें एवं नीचे लाते हुए श्वास छोड़ें।

टिप्पणी – इसका अभ्यास एक-एक हाथ ऊपर एवं नीचे क्रमवार रूप से रखते हुए भी किया जा सकता है।

द्वितीय अभ्यास (स्कन्ध चक्र चालन) –

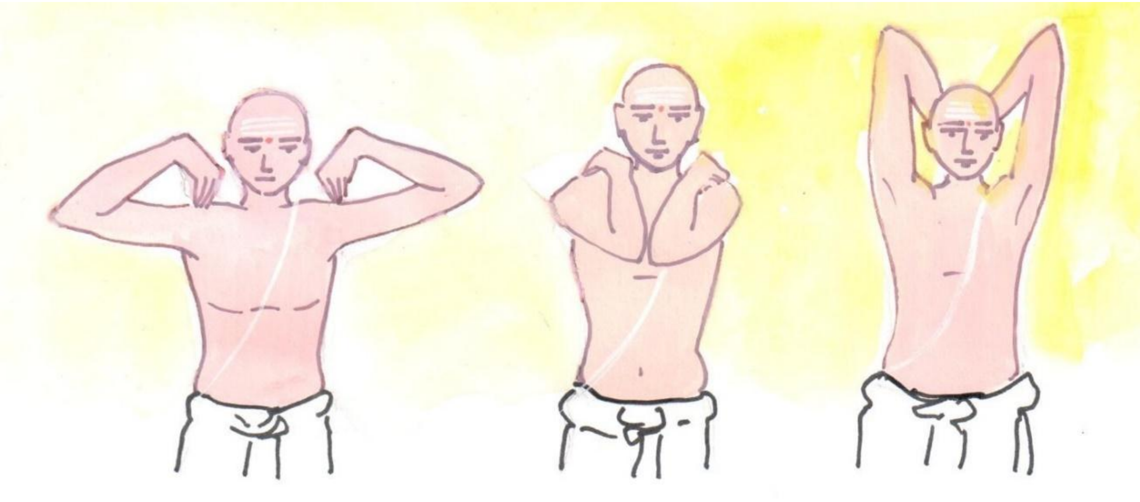

1. सीधे खड़े हो जाएँ एवं कन्धों को सीधा रखें।
2. बाएँ हाथ की अँगुलियों को बाएँ कन्धे पर तथा दाएँ हाथ की अँगुलियों को दाएँ कन्धे पर रखें।
3. दोनों कोहनियों को गोलाकार घुमाएँ। कोहनियों को आगे की ओर लाते हुए वक्षःस्थल के सामने स्पर्श करने का प्रयास करें।
4. इसीके विपरीत ओर घूमने पर हाथों को कानों से स्पर्श कराने का प्रयास करें।
5. इस अभ्यास को 5-10 बार दोहराएँ।

लाभ -

- इनके अभ्यास से रीढ़ की हड्डी, स्कन्ध, मांसपेशियाँ एवं हड्डियाँ मजबूत तथा स्वस्थ होती हैं। यह तन्त्रिकाओं को सुदृढ़ बनाता है।
- सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस की बीमारी में अत्यन्त लाभदायक है।

➢ **कटि के सूक्ष्म व्यायाम**

1. दोनों पैरों के बीच 2 से 3 फीट की दूरी रखते हुए दोनों भुजाओं को कन्धों के समानान्तर उठाएँ। दोनों हथेलियाँ समानान्तर स्थिति में एक-दूसरे के सामने होनी चाहिए।

2. श्वास को बाहर छोड़ते हुए शरीर को बाईं ओर घुमाएँ। श्वास को अन्दर लेते हुए पुनः पूर्व-अवस्था में आ जाएँ।

3. इसी प्रकार श्वास को बाहर छोड़ते हुए शरीर को दाएँ ओर घूमाएँ, एवं पुनः श्वास लेते हुए पूर्व स्थिति में लौट आयें।
4. इस प्रकार यह एक चक्र पूर्ण हुआ। इस विधि को 5 बार दोहराएँ।

सावधानी -

- हृदय-रोगियों को इसका अभ्यास सावधानीपूर्वक करना चाहिए।
- गम्भीर पीठ दर्द, स्लिप डिस्क, उदर-अङ्गों के आपरेशन आदि स्तिथियों में इसका अभ्यास नहीं करना चाहिए।
- सहजतापूर्वक श्वास लेते हुए इसका अभ्यास करना चाहिए।

➢ **घुटने एवं पैर के सूक्ष्म व्यायाम**

1. सर्वप्रथम शरीर को सीधा रखते हुए खड़े हो जाएँ। पैरों को कन्धों के समानान्तर दूरी पर रखें।
2. श्वास लेते हुए दोनों भुजाओं को कन्धों के स्तर तक लेकर आएँ तथा हथेलियों को नीचे की ओर रखें।

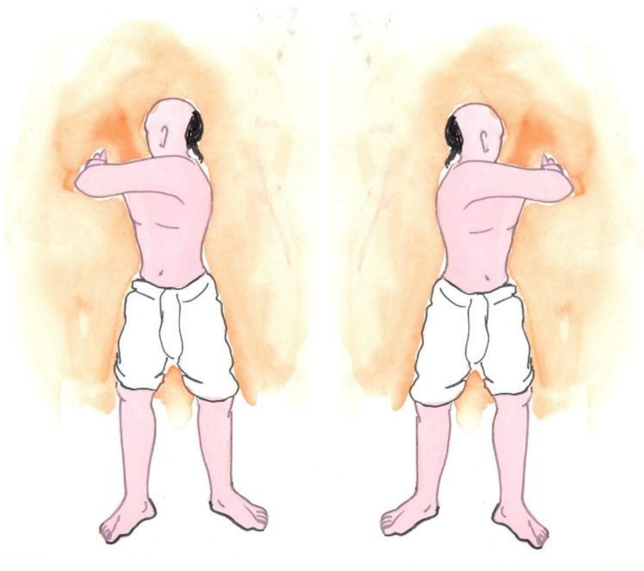

3. श्वास छोड़ते हुए घुटनों को मोड़ें एवम् अपने शरीर को कुर्सी पर बैठने की स्थिति में लेकर आएँ। हाथों को सीधा एवं जङ्घाओं को भूमि से समानान्तर रखें।
4. पुनः श्वास लेते हुए को शरीर को सीधा रखें, एवं हाथों को पूर्वावस्था में ले आएँ। इस विधि को 5 बार दोहराएँ।

सावधानी -

- घुटनों-कूल्हों के जोड़ों की पीड़ा में, ऑर्थोराइटिस , स्लिपडिस्क में इसका अभ्यास न करें।

5.3 सूर्यनमस्कार

सूर्यनमस्कार से तात्पर्य है- भगवान् सूर्य के प्रति नमन एवम् आदर का भाव। वैदिकयुग के महान् ऋषि-मुनियों के द्वारा ही हमें सूर्योपासना की परम्परा प्राप्त हुई है। वेदों में सूर्य को सम्पूर्ण सृष्टि का प्राण एवं जीवनी-शक्ति बताया गया है। भारत में प्राचीनकाल से ही नित्य प्रातःकाल सन्ध्योपासना, सूर्यनमस्कार एवं योगाभ्यास करने की परम्परा रही है। सूर्यनमस्कार करने से शारीरिक एवं मानसिक क्लेशों का नाश होता है तथा मनुष्य आध्यात्मिक-उन्नति को प्राप्त होता है। अतः कहा भी गया है -

आदित्यस्य नमस्कारान् , ये कुर्वन्ति दिने दिने।
आयुः प्रज्ञा बलं वीर्यं, तेजस्तेषां च जायते ॥

जो नित्य भगवान् आदित्य (सूर्य) को नमस्कार करते हैं, उन्हें दीर्घायु, श्रेष्ठ बुद्धि, विवेक, बल, ओज तथा तेज की प्राप्त होती है।

सूर्यनमस्कार के अभ्यास से शरीर के सभी अङ्ग, सन्धियाँ, मांसपेशियाँ एवं सम्पूर्ण नाड़ी-मण्डल स्वस्थ एवं सुचारु होते हैं। शरीर में लचीलापन एवं रक्त-सञ्चरण की वृद्धि होती है तथा अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की प्रक्रिया का नियमन होता है। सूर्यनमस्कार विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त आवश्यक अभ्यास माना जाता है। इसके 12 चरणों में कई आसन-समूहों के अभ्यास स्वतः ही हो जाते हैं। नित्य 12 सूर्यनमस्कार करने से विद्यार्थी अद्भुत बौद्धिक एवं शारीरिक क्षमताओं, ऊर्जा, आरोग्य तथा जीवनी-शक्ति से लाभान्वित हो सकते हैं।

सूर्यनमस्कार के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

प्रथम स्थिति - (नमस्कार मुद्रा)

पूर्वदिशा में मुहँ करके दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना की मुद्रा में सीधे खड़े हो जाएँ। कोहनियाँ एकदम जमीन की ओर रुख करती हुई पृथ्वी के समानान्तर हों, श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य हो, गहरी लम्बी श्वास लें। अनाहतचक्र अर्थात् हृदय स्थान पर ध्यान करते हुए सूर्यदेव का ध्यान करें। 'ॐ मित्राय नमः' मन्त्र का सुदीर्घ उच्चारण करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रां' ।

द्वितीय स्थिति - (हस्त उत्तानासन)

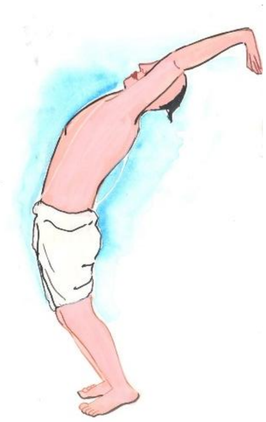

सूर्य-नमस्कार के दूसरे सोपान में दोनों भुजाओं को सीधा करके सिर से ऊपर ले जाइये। गहरा लम्बा श्वास लेकर शरीर एवं भुजाओं को तानिये। कन्धों को कानों से स्पर्श कराते हुए रखे। भुजाएँ, सिर और ऊपरी धड़ को धीरे-धीरे पीछे की ओर जितना झुका सकें, झुकाइये। मन की एकाग्रता विशुद्धि-चक्र (कण्ठ स्थान) पर करते हुए 'ॐ रवये नमः' मन्त्र का उच्चारण करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रीं' ।

तृतीय स्थिति - (पाद हस्तासन)

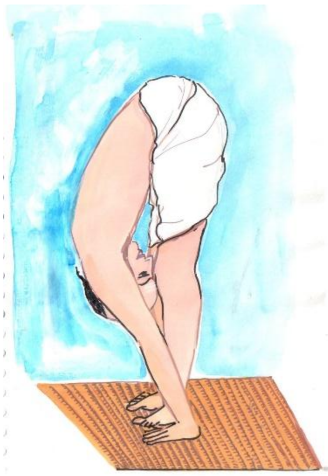

अब तीसरी स्थिति में श्वास छोड़ते हुए सामने की ओर धीरे-धीरे झुकते चले जायें जब तक कि हाथों से पंजों का स्पर्श पैरों से न हो जाये। मस्तक को घुटनों से स्पर्श कराएँ, घुटने मुड़ने नहीं पायें। पैर सीधे और सम रहें। अधिक से अधिक श्वास बाहर निकाल फेंकने के लिये पेट का सङ्कुचन करें। स्वाधिष्ठान चक्र (पेडूस्थान) पर ध्यान एकाग्र करते हुए 'ॐ सूर्याय नमः' मन्त्र का उच्चारण करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रूं' ।

चतुर्थ स्थिति - (अश्वसञ्चालनासन)

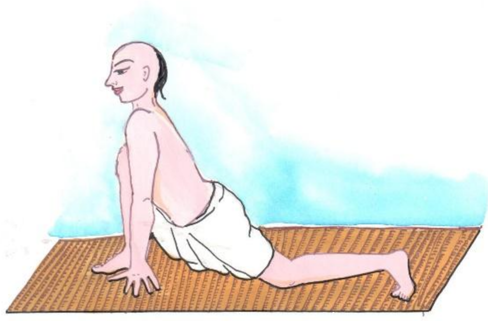

अब सूर्य-नमस्कार की इस चौथी स्थिति में श्वास लम्बा खींचते हुए बाँयें पैर को जितना सम्भव हो सके, पीछे की ओर फैलाइएँ। श्वास लेते हुए दाँयें पैर को पीछे की ओर तथा बाएँ पैर को घुटने से मोड़ें । सिर को पीछे की ओर खींचते हुए रीढ़ को कमान की आकृति में मोड़ते हुए आकाश की ओर देखें। आज्ञाचक्र (भ्रूमध्य पर) ध्यान केन्द्रित करते हुए 'ॐ भानवे नमः' मन्त्र का सुदीर्घ उच्चारण करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रैं' ।

पञ्चम स्थिति - (पर्वतासन)

पाँचवीं स्थिति में दाये पैर को पीछे ले जाकर बाँये पैर के बराबरी पर, जमीन पर रखें। दोनों पैरों के पूरे तलवे (एड़ी, पंजा सहित) जमीन पर बलपूर्वक टिकाये। साँस बाहर छोड़ते हुए कमर व नितम्बों को जितना ऊपर उठा सके, अधिकतम ऊँचाई तक ऊपर उठावे। दृष्टि नाभिपर रहे। ध्यान की एकाग्रता विशुद्धि-चक्र कण्ठस्थान पर रखे। 'ॐ खगाय नमः' मन्त्र का उच्चस्वर से सुदीर्घ उचारण करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रौं' ।

षष्ठ स्थिति - (अष्टाङ्ग नमस्कार)

सूर्य-नमस्कार के षष्ठ सोपान में दोनों घुटनों को जमीन पर टिकायें, पाँवों के दोनों पंजों को पलट कर तलवे ऊपर आकाश की ओर तथा पंजों का पृष्ठ भाग नीचे भूमि पर स्पर्श कराये। अब शरीर के आठ अङ्ग - दोनों हाथ, दोनों पाँव, दोनों घुटने, एक ठोड़ी और वक्षःस्थल को जमीन पर टिकाएँ। इस स्थिति में मन की एकाग्रता मणिपुर-चक्र (नाभिस्थान) पर धारित करते हुए 'ॐ पूष्णे नमः' मन्त्र का सुदीर्घ उच्चारण करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रः' ।

सप्तम स्थिति - (भुजङ्गासन)

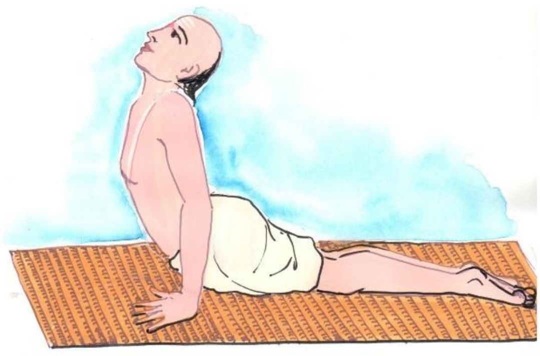

इस स्थिति हेतु जमीन पर रखे हुए हाथों के पँजों को जमीन पर ही टिके हुए रहने दें, किन्तु कोहनी को सीधा करके तान लें। अब पूरक द्वारा श्वास भरते हुए सिर तथा गर्दन को ऊपर उठा कर पीछे की ओर तानें। दृष्टि आसमान की तरफ कर लें। कमर को धनुषाकार बनाते हुए स्वाधिष्ठान-चक्र

(नाभि से नीचे पेडू स्थान) पर ध्यान केन्द्रित करें। इस स्थिति को साधते हुए 'ॐ हिरण्यगर्भाय नमः' मन्त्र का उच्चारण उच्च स्वर में करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रां' ।

अष्टम स्थिति - (पर्वतासन)

इस स्थिति को बनाने के लिये शरीर को सामान्य शिथिल करते हुए दोनों पैरों के पंजों को पुनः पलटकर तलवे भूमि पर स्थापित करें। श्वास छोड़ते हुए हाथों एवं पाँवों के बीच की दूरी कम करते हुए थोड़ा समीप लाएँ। कमर एवं कूल्हों को ऊपर आकाश की ओर उठाकर तानें। एड़ी सहित पूरा पंजा जमीन पर बलपूर्वक जमावें। यह स्थिति पूर्व में की गई स्थिति क्रमाङ्क 5 की पुनरावृत्ति है। इसमें भी पर्वतासन की स्थिति बनती है। 'ॐ मरीचये नमः' मन्त्र का उच्चारण करते हुए विशुद्धि-चक्र (कण्ठस्थान) पर एकाग्रता केन्द्रित करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रीं'।

नवम स्थिति - (अश्व-सञ्चालनासन)

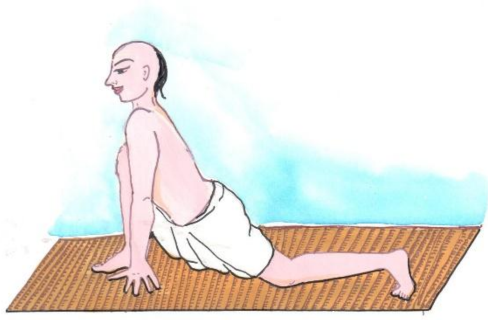

स्थिति 9 को बनाने के लिये बायें पैर को आगे लायें। पैर को दोनों हाथों की सीध में तथा उनके ठीक बीच में रखें। बाँये पैर के घुटने को सीधा करके वहीं जमे रहने दें। दोनों भुजाएँ अपने-अपने स्थान पर ही रहें किन्तु उन्हें सीधी तानकर रखें। सिर एवं सीने को ऊपर उठाते हुए गहरी लम्बी साँस लें। सिर को थोड़ा पीछे की ओर तानें। एकाग्रता आज्ञा-चक्र (भ्रूमध्य) पर करते हुए 'ॐ आदित्याय नमः' मन्त्र का सस्वर सुदीर्घ उच्चारण कीजिये। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रूं' ।

दशम स्थिति - (पादहस्तासन)

अब स्थिति 10 में आने के लिये दाहिने पैर के पंजे को आगे लाकर बाँये पैर के पंजे के पास बराबरी पर स्थापित करें। श्वास छोड़ते हुए पैरों को सीधा तानें और हाथों को पैरों के आस-पास रखते हुए

सीधा तानें। कमर व नितम्बों को आकाश की तरफ ऊँचा उठावें। मस्तक को घुटनों से स्पर्श करावें। पूर्व-स्थिति 3 की यह पुनरावृत्ति है। स्वाधिष्ठान-चक्र (नाभि से नीचे पेडू स्थान) पर ध्यान केन्द्रित करते हुए 'ॐ सवित्रे नमः' मन्त्र का सुदीर्घ उच्चारण करें। बीज-मन्त्र - 'ॐ हैं' ।

एकादश स्थिति (हस्त उत्तानासन)

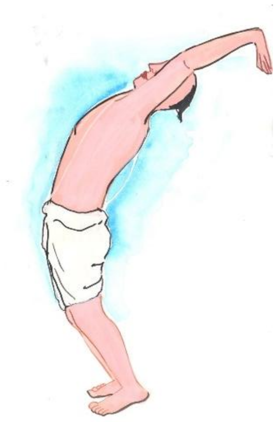

यह स्थिति पूर्व स्थिति 2 की पुनरावृत्ति है। इस स्थिति में स्थित होने के लिये श्वास भीतर खींचते हुए और दोनों भुजाओं को कानों से स्पर्श कराते हुए सिर से ऊपर उठाकर ताना जाता है। धड़, सिर एवं भुजाओं को पीछे की ओर यथासम्भव झुकाया जाता है। यही स्थिति हस्त उत्तानासन की है। इस स्थिति को बनाकर विशुद्धि-चक्र (कण्ठस्थान) पर ध्यान केन्द्रित करते हुए 'ॐ अर्काय नमः' मन्त्र का सुदीर्घ उच्चारण किया जाता है। बीज-मन्त्र - 'ॐ ह्रौं' ।

द्वादश स्थिति (नमस्कार मुद्रा)

यह सूर्य-नमस्कार की बारहवीं और अन्तिम कड़ी है। यह नमस्कार की प्रथम स्थिति की पुनरावृत्ति भी है। इस स्थिति को प्राप्त करने के लिये नमस्कार मुद्रा में दोनों हाथों को जोड़कर सीधे खड़े हो जाएँ। श्वास-प्रश्वास सामान्य-रूप से चलने देना चाहिये। एकाग्रता अनाहतचक्र (हृदय-स्थान) पर रखते हुए 'ॐ भास्कराय नमः' का सुदीर्घ उच्चारण करें। ऐसा करते हुए सूर्य नमस्कार पूर्ण हो जाता है। बीज-मन्त्र - 'ॐ हः' ।

लाभ

- सूर्य नमस्कार के अभ्यास के द्वारा मानसिक एवं शारीरिक दोनों स्तरों पर ऊर्जा का सन्तुलन प्राप्त होता है। शरीर की सभी क्रियाओं को सुव्यवस्थित करने में सूर्य नमस्कार अति लाभदायक हैं। वहीं मानसिक स्वास्थ्य, बुद्धि, एकाग्रता तथा स्मरण शक्ति को बढ़ाने में भी लाभदायक सिद्ध होता है। अतः विद्यार्थियों के लिए सूर्य नमस्कार का अभ्यास अत्यन्त आवश्यक होता है।
- यह प्राणशक्ति का सञ्चार कर शरीर में बल, बुद्धि, तेज, ओज एवं सामर्थ्य बढ़ाने में अत्यन्त सहायक है।

- यह शरीर की अधिक चर्बी को हटाने में सहायता करता है ।
- यह कब्ज को दूर करने में सहायता करता है और शरीर के रक्त सञ्चार में सुधार करता है।
- यह शरीर को ऊर्जाप्रदान करता है ।
- यह बढ़ते हुए बच्चों की लंबाई बढ़ाने और उनके शरीर को स्वस्थ रखने में सहायता करता है ।
- यह शरीर को बल प्रदान करता है और मन को स्फूर्ति से युक्त बनाता है ।
- इससे पेट के अङ्गों में खिंचाव होता है और पाचन क्षमता में सधुार होता है ।

सीमाएँ

- उच्च रक्तचाप, बुखार, हृदय-रोग, हर्निया, स्लिप-डिस्क, आन्त्र-तपेदिक और साइटिका (Sciatica) होने पर सूर्यनमस्कार का अभ्यास नहीं करना चाहिए ।

5.4 आसन

हठस्य प्रथमाङ्गत्वादासनं पूर्वमुच्यते।
कुर्यात्तदासनं स्थैर्यमारोग्यं चाङ्गलाघवम्॥

आसन, हठयोग का प्रथम अङ्ग है, अतः सर्वप्रथम उसका निरूपण करते हैं। आसन (मानसिक एवं शारीरिक) स्थिरता, आरोग्य तथा अङ्गों में हल्कापन (का अनुभव) लाता है।

- हठयोगप्रदीपिका - 1.7

'आसन' का शाब्दिक अर्थ है - 'बैठने की मुद्रा' या 'वह वस्तु, जिस पर बैठा जाए।' योगासन हमारे महान् ऋषि-मुनियों द्वारा प्रदत्त योगविद्या का एक महत्त्वपूर्ण अङ्ग है, जिसमें शारीरिक अङ्गों की चेतना, संवेगों एवं चेष्टाओं को नियन्त्रित करते हुए विशेष शारीरिक स्थितियों एवं मुद्राओं का निर्माण किया जाता है।

स्थिरसुखमासनम् ॥

वह शारीरिक-स्थिति जो सुखद एवं स्थिर है, अर्थात् जिस स्थिति में स्थिर एवं निश्चल होकर (बिना हिलन-चलन के) दीर्घ काल तक सुखपूर्वक बैठा जा सके, वह आसन है।

- योगदर्शन 2.46

आसनों के अभ्यास से हमारे शरीर के विभिन्न अङ्गों पर दबाव एवं खिंचाव होने के कारण आन्तरिक अवयवों की मालिश होती है एवम् उनमें रक्त-सञ्चरण तथा ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ती है।

शरीर में व्याप्त रोगों एवं व्याधियों का शमन होता है तथा शारीरिक स्वास्थ्य के विभिन्न गुणों जैसे लचीलापन, दक्षता, स्फूर्ति, सत्त्वगुण, सकारात्मक ऊर्जा आदि का विकास होता है।

'हठयोगप्रदीपिका' में आसन से होने वाले लाभ का वर्णन करते हुए कहा है कि -

कुर्यात्तदासनं स्थैर्यमारोग्यं चाङ्गलाघवम् ॥

आसन करने के पश्चात् शरीर एवं मन में स्थिरता, आरोग्य (रोग से मुक्ति) एवम् अङ्गों में लाघव (हल्कापन) आता है।

– हठप्रदीपिका 1.17

आसनों का अभ्यास केवल शारीरिक स्वास्थ्य ही प्रदान नहीं करता, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य एवम् आत्मिक चेतना के विकास में भी यह अत्यन्त लाभदायी होते हैं।

योगासन की सिद्धि हेतु निम्न उपाय पातञ्जलयोगदर्शन में वर्णित हैं -

प्रयत्नशैथिल्यानन्तसमापत्तिभ्याम् ॥

शरीर-सम्बन्धी सभी प्रकार की क्रियाओं एवं तनाव को त्याग देना ही प्रयत्न की शिथिलता कही गई है। अतः इन चेष्टा-रूपी प्रयत्नों को त्यागकर नित्य अनन्त में समर्पित होने से ही आसनों की सिद्धि हो जाती है।

– योगदर्शन 2.47

योग-आसनों से जहाँ तन्त्रिका-तन्त्र (Nervous System), स्नायु स्वस्थ होते हैं, अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से निष्कासित स्रावों (Harmones) का प्रवाह समुचित तथा नियन्त्रित होता है, जिससे मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है, वहीं शरीर में स्थित चक्रों पर सूक्ष्म (Subtle) स्तर पर प्रभाव पड़ने के कारण आध्यात्मिकता के विषय में भी आसनों का अभ्यास विशेष लाभदायी है।

शरीररचना-शास्त्र के आधार पर आसनों को तीन प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है-

1. **ध्यानात्मक आसन -**

वे सभी आसन जिनमें लम्बे समय तक निश्चल बैठा जा सके। शक्ति का व्यय कम हो तथा ध्यान की प्रक्रिया में सहायक हो; ऐसे आसन ध्यानात्मक की श्रेणी में आते हैं। जैसे - पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन, वज्रासन आदि।

2. **शरीर-संवर्धनात्मक आसन -**

इनके अन्तर्गत उन सभी आसनों का समावेश किया गया है, जिसके द्वारा शारीरिक स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। इन आसनों में गत्यात्मक रूप से शरीर को विभिन्न प्रकार से मोड़ना, तानना एवम् अनेक प्रकार की मुद्राओं में शरीर को स्थिर रखना आदि किया जाता है। इनके अभ्यास से शरीर का परिसञ्चरण तन्त्र, स्नायु एवं तन्त्रिका तन्त्र, पाचन-तन्त्र, उत्सर्जन-तन्त्र, अन्तःस्रावी तन्त्र आदि शारीरिक तन्त्र एवं संस्थान स्वस्थ व सुचारु होते हैं। भुजङ्गासन, धनुरासन, नौकासन, अर्धमत्स्येन्द्रासन, हलासन, उष्ट्रासन, शीर्षासन आदि शरीर संवर्धनात्मक आसनों के उदाहरण हैं।

3. **शरीर शिथिलीकरण एवं विश्रान्तिकारक आसन -**

शारीरिक थकान, व्याधियों एवं मानसिक-तनाव को दूर करके शरीर एवं मन को पूर्ण शिथिल एवं विश्रान्ति प्रदान करने वाले आसन शिथिलीकरण- आसन की श्रेणी में आते हैं। शवासन, मकरासन, योगनिद्रा आदि शरीर- शिथिलीकरण हेतु मुख्य योगाभ्यास कहे गए हैं।

आसनों के अभ्यास हेतु सामान्य दिशा-निर्देश -

- आसनों का अभ्यास शारीरिक क्षमता से अधिक न करें।
- धीरे-धीरे समय एवं मात्रा बढावें।
- प्रारम्भ में जितना बन सके, उतनी ही शुद्धता में सन्तोष करना चाहिए।
- धैर्यपूर्वक धीरे-धीरे आदर्श-स्वरूप की ओर अभ्यास बढ़ना चाहिए क्योंकि अङ्गों पर अधिक बल प्रयोग करने से हानि होने की सम्भावना होती है।
- वस्तुतः आसनों का अभ्यास खुली हवा में करना चाहिए किन्तु अधिक सर्दी, गर्मी, धूप, वर्षा आदि से बचना चाहिए।
- योगासनों के अभ्यास के दौरान श्वास-प्रश्वास की स्थिति सामान्य होनी चाहिए परन्तु निर्देश के अनुसार परिवर्तन होना आवश्यक है। सामान्यतः योगासनों में ऊपर की ओर जाने पर श्वास लेना चाहिए। उसीके विपरीत नीचे की ओर जाने पर श्वास छोड़ना चाहिए।
- अभ्यास के दौरान कभी भी थकान महसूस होने पर शवासन किया जा सकता है। श्वास-प्रश्वास एवं शरीर में हो रहे सभी परिवर्तनों के प्रति पूरी सजगता का भाव रखना चाहिए।

- प्रत्येक आसन के पश्चात् उक्त आसन के लिए वर्णित विपरीत आसन का अभ्यास अवश्य करना चाहिए। क्लिष्ट एवं तकनीकी आसन जैसे, शीर्षासन, मयूरासन, सर्वाङ्गासन, चक्रासन आदि का अभ्यास गुरु की देख-रेख में ही करना चाहिए।
- सामान्यतः योगिक अभ्यासों को प्रातः सूर्योदय से पहले उठकर करना चाहिए, परन्तु सायङ्काल में भी इनका अभ्यास किया जा सकता है। प्रातः शौच के पश्चात् एवं सायङ्काल भोजन के पूर्व ही इनका अभ्यास करें।

आसनों के लाभ -

- आसनों के अभ्यास से शरीर के अङ्गों में लचीलापन और मजबूती आती है।
- शरीर के अनेक रोग, जैसे - कब्ज, मल, विकार, विषाक्तता, अनावश्यक - वायु, कफ, पित्त आदि शरीर से बाहर हो जाते हैं।
- नाड़ी-समूह की मृदुता में वृद्धि होती है।
- शरीर का भारीपन दूर होकर हल्कापन एवं स्फूर्ति महसूस होती है।
- आसन करने से सर्दी-गर्मी आदि द्वन्द्व बाधा नहीं देते। शरीर की सहनशीलता बढ़ जाती है।
- श्वसन-क्रिया ठीक और नियमित हो जाती है।
- एकाग्रता बढ़ जाती है, जिससे चित्त को स्थिर करने में मदद मिलती है।
- प्राण-तत्त्व का उद्‌र्ध्वगमन (ऊँचाई की ओर जाना) सिद्ध होता है। इससे शरीर निरोगी और तेजस्वी हो जाता है।
- आसन सिद्ध हो जाने पर आगे की योग-क्रियाओं - प्राणायाम, धारणा, ध्यान, समाधि के लिये पात्रता (क्षमता) प्राप्त हो जाती है।

योगासन :

- **उत्कटासन**

अङ्गुष्ठाभ्यामवष्टभ्य धरां गुल्फौ च खे गतौ।
तत्रोपरि गुदं न्यस्य विज्ञेयं तूत्कटासनम्॥

पैरों के अँगूठों को भूमि पर रखकर उनके सहारे बैठें और एड़ियों को पैर पर न टिकने दें तथा गुदा-स्थान को एड़ियों पर रख लें। इसे उत्कटासन कहते है। - घेरण्डसंहिता - 2.28

संस्कृत के शब्द् उत् का अर्थ 'उठा हुआ' और कट का अर्थ 'नितम्ब' होता है । यह स्थिति उत्कटासन इसलिए कहलाती है; क्योंकि इसमें नितम्ब (कुल्हे) ऊपर की ओर उठे हुए होते हैं ।

उत्कटासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें —

1. दोनों पैर भूमि पर स्थिर करके सीधे खड़े हो जाएँ । अब पैरों के मध्य थोड़ी दूरी रखें । दोनों भुजाओं को सामने की ओर कन्धों के समानान्तर ऊपर उठाएँ तथा हथेलियाँ नीचे की ओर होनी चाहिए ।
2. एड़ियों को ऊपर हवा में उठाते हुए पंजों के बल खड़े हो जाएँ और धीरे-धीरे पंजों के सहारे बैठ जावें ।
3. इस स्थिति में 5-10 सेकण्ड तक बने रहें।
4. पुनः अवस्था में आने के लिए धीरे-धीरे खड़े हो जाएँ।
5. एड़ियों को ज़मीन पर टिकाते हुए हाथों को नीचे लाएँ एवं पैरों को एक-दूसरे के समीप ले आएँ। भूमि पर दृढ़ता से पैर जमाते हुए सीधे खड़े हो जाए।

उत्कटासन

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	अन्तिम स्थिति में आते समय और पुनः लौटते समय सन्तुलन बनाये रखें।	1.	आगे की ओर न झुकें।
2.	आसन-स्थिति में शरीर का ऊपरी भाग सीधा रहे।		

लाभ -

- यह कमर तथा नितम्ब से वसा कम करके शरीर की आकृति को सुडौल बनाता है।
- आत्मविश्वास की वृद्धि में सहायक होता है।
- यह पाचन-तन्त्र को स्वस्थ करता है और पैरों की माँसपेशियों, भुजाओं, कन्धों, श्रोणि-प्रदेश तथा पीठ के हिस्सों को सुदृढ बनाता है।
- यह आसन घुटने, टखने और नितम्ब की सन्धियों (जोड़ों) को स्वस्थ एवं सुचारु बनाता है।

सीमाएँ -

- चक्कर आने की शिकायत एवं सन्धिवात (घुटनों और टखने के जोड़ों में पीड़ा और कड़ापन) हो, तो यह आसन नहीं करना चाहिए।

➢ **गरुडासन**

जङ्घोरुभ्यां धरां पीड्य स्थिरकायो द्विजानुना।
जानूपरि करद्वन्द्वं गरुडासनमुच्यते ॥

दोनो जङ्घाओं एवं घुटनों से भूमि को दबायें तथा शरीर को स्थिर रखें। दोनों घुटनों पर दोनों भुजाओं को रखकर बैठ जायें। यह गरुडासन कहा गया है।

- घेरण्डसंहिता - 2.37

इस आसन का नाम पक्षी गरुड़ के नाम पर रखा गया है। अतः गरुडासन कहा जाता है।

गरुडासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. सीधे खड़े हो जाएँ, पैर को आपस में मिला लें तथा हाथों को जङ्घाओं के समीप रख लें।

2. अब बायें पैर को सन्तुलित करते हुए दायाँ पैर ऊपर उठाएँ ,दाएँ घुटने को मोड़ें और इसे बाएँ पैर के आस-पास लपेट लें ।

3. अब बाँयी कोहनी को नीचे रखते हुए हाथों को आपस में लपेट लेवें। हथेलियों को जोड़कर सामने की ओर नासिका के समीप रखें। शरीर को यथासम्भव सीधा रखने का प्रयास करें। इसी स्थिति में 5 से 10 सेकण्ड बने रहें।

4 पुनः लौटने के लिए भुजाओं को खोल दें एवं दाएँ पैर को भूमि पर रख दें। पैरों तथा भुजाओं की स्थिति को बदलकर इसी प्रक्रिया को दूसरी ओर से भी दोहराएँ।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	शरीर को स्थिर रखें तथा एक बिन्दु पर एकाग्रता बनाये रखे।	1.	घुटनों पर दबाव न डाले।

लाभ -

- यह आसन, एकाग्रता के विकास एवं शरीर में सन्तुलन विकसित करने में सहायक है।
- यह पैरों एवं भुजाओं के जोड़ों तथा माँसपेशियों को स्वस्थ रखने में सहायता करता है।
- शरीर के निचले अङ्गों में रक्त-सञ्चरण को बढ़ाता है।
- मेरुदण्ड को सुदृढ एवं स्वस्थ बनाता है।

सीमाएँ -

- हड्डियों में चोट एवं जोडों तथा माँसपेशियों के दर्द, ऐंठन आदि समस्याओं में इस आसन का अभ्यास न करें।

➢ **स्वस्तिकासन**

जानूर्वोरन्तरे कृत्वा योगी पादतले उभे।
ऋजुकायसमासीनः स्वस्तिकं तत् प्रचक्षते॥

दोनों जङ्घाओं एवं घुटनों के बीच दोनों पैरों के तलवों को रख कर त्रिकोणाकार आसन लगायें तथा समभाव में बैठ जाएँ। इसे स्वस्तिकासन कहा गया है। *घेरण्डसंहिता - 2.14*

संस्कृत शब्द स्वस्तिक दो शब्दों से बना है । सु अर्थात् 'शुभ' तथा अस्ति अर्थात् 'होना'। इस प्रकार स्वस्तिक आसन से तात्पर्य 'शुभ होना या स्वस्थ होना' के रूप में माना जा सकता है।

स्वस्तिकासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. पैरों को सामने फैलाकर सीधा बैठ जाएँ । बाएँ पैर को मोड़ते हुए बाँयीं एड़ी को गुदा एवम् उपस्थेन्द्रिय (Groin area) के मध्य जमाकर रखें।
2. अब बाएँ पैर को मोड़ते हुए दाँयीं एड़ी को उपस्थेन्द्रिय के ठीक ऊपर रखें।
3. मेरुदण्ड सीधा रखते हुए हाथों को ज्ञान-मुद्रा में घुटनों पर रखें। ज्ञान मुद्रा बनाने के लिए तर्जनी अँङ्गुली को मोड़कर अँङ्गूठे ऊपरी भाग से मिला देवें।
4. हाथों को मुक्त करते हुए दाएँ पैर को सामने की ओर फैलाएँ एवं बाएँ पैर को खोलकर उसे पूर्व-स्थिति में वापस ले आएँ।
5. पुनः दूसरी ओर से भी इसी स्थिति को दोहरायें।

करने योग्य		**न करने योग्य**	
1.	आसन के दौरान मेरुदण्ड को सीधा रखें एवं श्वास-प्रश्वास पर अपना ध्यान बनाकर रखें।	1.	गुदा एवम् उपस्थेन्द्रिय पर बलपूर्वक दबाव न डालें।

लाभ -

- घुटनों एवं टखनों के जोड़ों के लचीलेपन को बढ़ाता है ।
- ब्रह्मचर्य पालन हेतु विशेष लाभदायक है।
- मन की एकाग्रता के विकास हेतु सहायक है।

सीमाएँ -

▪ स्लिप-डिस्क, कमर-दर्द, साइटिका (sciatica) एवं घुटनों और टखनों के दर्द से पीड़ित व्यक्तियों को यह आसन नहीं करना चाहिए।

➢ **सिंहासन**

गुल्फौ च वृषणस्याधो व्युत्क्रमेणोर्ध्वतां गतौ।

चितियुग्मं भूमिसंस्थं करौ च जानुनोपरि॥
व्यात्तवक्त्रो जलन्ध्रेण नासाग्रमवलोकयेत्।
सिंहासन भवेदेतत्सर्वव्याधिविनाशकम्॥

दोनों पाँवों की एड़ियों को व्युत्क्रमपूर्वक अण्डकोशों के नीचे लगाकर जालन्धर बन्ध सहित भौंहों के मध्य में दृष्टि स्थिर करें अथवा नासिका के अग्रभाग में ही निश्चल दृष्टि रखें। यह सिंहासन नामक आसन सभी रोगों को नष्ट करने वाला है।

- घेरण्डसंहिता - 2.15, 16

सिंहासन के अभ्यास के दौरान जिह्वा को बाहर की ओर करके सिंह के समान मुखाकृति प्रतीत होती है। अतः इसे सिंहासन कहा गया है।

सिंहासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. सर्वप्रथम वज्रासन में बैठ जायें। दोनों घुटनों को फैलाकर तथा पैर के पञ्जों को मिलाकर रखें।
2. नितम्बों को दोनों एड़ियों के ऊपर रखें।
3. अब आगे की ओर झुकते हुए हथेलियों को घुटनों के बीच में भूमि पर रखें।
4. मुँह खोलें एवं यथासम्भव जीभ को बाहर निकालें तथा भ्रूमध्य में देखें। इस स्थिति में 10 सेकण्ड तक बने रहें।

5. पुनः लौटने के लिये अपनी आँखों को सामान्य अवस्था में लेकर आएँ, हथेलियों को घुटनों पर रखकर वज्रासन में बैठ जाएँ।

	करने योग्य		**न करने योग्य**
1.	घुटनों को भूमि पर स्थिर रखें एवं एडियों पर बैठें।	1.	आँखों पर अत्यधिक दबाव ना डालें।
2.	अंगुलियों को फैला कर रखें।		

लाभ -

- यह थाईरॉइड के रोग में लाभदायक आसन है एवं जीभ को अधिक लचीला तथा स्वस्थ बनाता है।
- यह अभ्यास मुख एवं गर्दन की माँसपेशियों का समुचित व्यायाम है।
- यह खिन्नता को कम करता है।
- उच्चारण की अस्पष्टता को सुधारता है एवम् आत्मविश्वास में वृद्धि करता है।
- हठयोगप्रदीपिका (2.16) के अनुसार यह सभी रोगों का नाश करने वाला आसन है।

सीमाएँ -

- पीठदर्द, घुटनों और नितम्बों के जोड़ों में पीड़ा, गले के रोग आदि स्थिति में इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिये।

➢ **मण्डूकासन**

पृष्ठदेशे पादतलावङ्गुष्ठौ द्वौ च संस्पृशेत्।
जानुयुग्मं पुरस्कृत्य साध्येन्मण्डूकासनम्॥

दोनों पाँवों को पृष्ठभाग में ले जाकर मिलायें और अँङ्गूठे मिलाकर दोनों घुटनों को आगे रखें। इस प्रकार मण्डूकासन होता है।

- घेरण्डसंहिता - 2.34

मण्डूकासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. सर्वप्रथम वज्रासन में बैठ जायें। अँङ्गूठों को अन्दर की ओर रखते हुए मुट्ठी बनायें एवम् उन्हें नाभि के आस-पास जमाकर रखें। नाभि-क्षेत्र को मुट्ठियों से दबायें।
2. धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए, आगे की ओर झुकें एवं वक्षःस्थल को जङ्घाओं से टिका देवें।
3. सिर एवं गर्दन को उठाकर रखें एवं किसी बिन्दु पर एकाग्र रहें, इसी अवस्था में 10 से 15 सेकण्ड बने रहें।
4. पुनः लौटने के लिए शरीर को उठाते हुए नाभिक्षेत्र से अपनी दोनों मुट्ठियों को हटाएँ एवं वज्रासन में लौट आएँ।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	नाभिक्षेत्र पर यथासम्भव दबाव डालें।	1.	आगे की ओर झुकते हुए शरीर को झटका नहीं देवें।

2.	अन्तिम अवस्था में सिर एवं गर्दन को उठा कर रखें।		

लाभ -

- यह आसन मधुमेह एवं पाचन-सम्बन्धी रोगों में विशेष लाभदायक है।
- यह पेट से अनावश्यक वायुदोष का निष्कासन करता है।
- पीनियल-ग्रन्थि के लिये लाभदायक आसन है।
- यह आसन पेट, जङ्घाओं एवं नितम्बों की अतिरिक्त चर्बी को कम करता है।

सीमाएँ -

- स्पान्डलाईटिस, स्लीपडिस्क, कमर अथवा रीढ़ की हड्डी से सम्बन्धित रोगों वाले व्यक्ति इस आसन का अभ्यास न करें।

➢ **गोमुखासन**

सव्ये दक्षिणगुल्फं तु पृष्ठपार्श्वे नियोजयेत्।
दक्षिणेऽपि तथा सव्यं गोमुखं गोमुखाकृति॥

दाहिनी एड़ी को कटि के बायीं ओर एवं उसी प्रकार बायीं एड़ी को कटि के दाहिनी ओर स्थापित कर गाय के मुख के समान आकृति बनाने से गोमुखासन कहा गया है।

- हठयोगप्रदीपिका – 1.20

गो का अर्थ 'गाय' एवं मुख का अर्थ 'मुँह' होता है। इस आसन की स्थिति में गाय के मुख के समान शरीर की आकृति प्रतीत होती है। अतः इसे गोमुखासन कहा गया है।

गोमुखासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. दोनों पैरों को सामने की ओर फैलाकर बैठ जायें। मेरुदण्ड को सीधा रखें।
2. अब दाँये पैर को घुटनें से मोड़ते हुए बाँये नितम्ब के समीप रखें।
3. इसी प्रकार बाएँ पैर को भी घुटने से मोड़ते हुए दाँये नितम्ब के समीप रखें।
4. बाएँ भुजा को सिर के ऊपर ले जाकर पीठ की ओर मोड़ते हुए पीछे की ओर ले जाएँ।
5. दाएँ हाथ को कोहनी से मोड़ते हुए पीठ की ओर ले जाएँ एवं दोनों हथेलियों को एक-दूसरे से पकड़ लें। इस स्थिति में 10 से 15 सेकण्ड बने रहें।
6. पुनः लौटने के लिये दोनों हाथों एवं पैरों को खोले एवं प्रारम्भिक अवस्था में लौट आएँ।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	दोनों घुटनें एक-दूसरे के ऊपर रहें।	1.	घुटनों को ऊपर न उठने देवें।
2.	मेरुदण्ड सीधा रखते हुए एड़ियों को नितम्बों के समीप रखें।		

लाभ -

- इसके अभ्यास से कूबड़ आदि विकृतियाँ ठीक होती है।
- यह शारीरिक-मुद्रा (Posture) को सही करने में सहायक है।
- इस अभ्यास से एकाग्रता का विकास होता है। साथ ही मन भी शान्त करता है।
- यह फेफड़ों की क्षमता को बढ़ाता है एवं श्वसन-रोगों में लाभदायक है।

सीमाएँ -

- बवासीर से पीडित व्यक्तियों को इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

➢ **उष्ट्रासन**

अध्यास्य शेते पदयुग्मव्यस्तं, पृष्ठे निधायापि धृतं कराभ्याम्।
आकुञ्च्य सम्यग्ह्युदरास्यगाढम्, उष्ट्रं च पीठं यतयो वदन्ति॥

अधोमुख लेटें एवं दोनों पैरों को मोड़कर पीठ पर टिका लें तथा पैरों को हाथों से पकड़कर मुख और पैरों को दृढ़तापूर्वक सिकोड़ लें, यह उष्ट्रासन कहलाता है।

- घेरण्डसंहिता - 2.41

टिप्पणी- *वर्तमान में प्रचलित उष्ट्रासन की विधि उपर्युक्त से भिन्न है, जिसके अन्तर्गत वज्रासन की स्थिति में घुटनों के बल उठकर हाथों से दोनों ऐड़ियों को पकड़ते हुए मेरुदण्ड को मोड़कर पूरे शरीर को स्थिर रखा जाता है।*

संस्कृतभाषा में उष्ट्र शब्द का अर्थ 'ऊँट' होता है। इस आसन में अन्तिम स्थिति ऊँट के समान प्रतीत होती है, अतः इसे उष्ट्रासन कहा जाता है ।

उष्ट्रासन

ऊष्ट्रासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. सर्वप्रथम वज्रासन में बैठ जाएँ। अब पैरों की सभी अँगुलियों एवम् दोनों अँगूठों को भूमि पर टिकाते हुए घुटनों के बल खड़े हो जाएँ।
2. घुटनों को कन्धे की सीध में रखते हुए पैरों को समानान्तर दूरी पर रखें।
3. दोनों हाथों को सामने की ओर लाते हुए कन्धों की सीध में रखें। अब धीरे-धीरे श्वास लेते हुए दायें हाथ से दायें पैर की एड़ी को पकड़ लें। इसी प्रकार बायें हाथ से बाएँ पैर की एड़ी को पकड़ लें।
4. मेरुदण्ड को पीछे की ओर मोड़ते हुए सिर को पीछे की ओर ले जाएँ। इस स्थिति में 10 से 15 सेकण्ड बने रहें।
5. पुनः लौटने के लिए धीरे-धीरे अपने हाथों को पीछे से आगे की ओर घुमाते हुए लेकर आयें एवम् उन्हें जङ्घाओं के समीप लाकर वज्रासन में बैठ जाये।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	पीछे की ओर जाते हुए पृष्ठ-क्षेत्र को यथासम्भव तानें एवं शरीर का भार हाथों तथा पैरों पर सन्तुलित करके रखें।	1.	मेरुदण्ड पर बलपूर्वक दबाव न डालें।
2.	अन्तिम-अवस्था में सिर पीछे की ओर तथा जङ्घाओं को भूमि से लम्बवत् (90° कोण) रखें।	2.	अन्तिम-अवस्था में आँखे बन्द न रखें। अन्यथा चक्कर आने की सम्भावना बनती है।

लाभ -

- यह अन्तःस्रावी प्रणाली विशेष-रूप से थायराइड ग्रन्थि को स्वस्थ एवं सुचारु करने में सहायक है।
- यह सम्पूर्ण पाचन-तन्त्र एवम् उत्सर्जन तन्त्र को स्वस्थ बनाता है।
- यह रीढ़ की हड्डी को स्वस्थ एवं लचीला बनाकर रीढ़ की हड्डी की नसों (Spinal Nerves) को क्रियाशील बनाता है।

सीमाएँ -

- हर्निया, पेट से सम्बन्धित रोग, चक्कर आने की समस्या आदि व्याधियों में इस आसन का अभ्यास न करें।

➢ **शशाङ्कासन**

संस्कृत में शशाङ्क का अर्थ है– 'चन्द्रमा' या 'शश+अङ्क= शशाङ्क' अर्थात् अङ्क (गोद में खरगोश)। इस आसन में अन्तिम-अवस्था खरगोश के समान प्रतीत होती है। अतः यह शशाङ्कासन कहा गया है।

शशाङ्कासन

शशाङ्कासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. सर्वप्रथम वज्रासन में बैठ जाएँ एवं श्वास लेते हुए दोनों हाथों को सिर के ऊपर तक उठाएँ एवं हाथों को सीधा रखें।
2. श्वास छोड़ते हुए मस्तक, भुजाओं एवं ठोड़ी को भूमि पर रखें एवम् आँखें बन्द करके इस अवस्था में 10 से 15 सेकण्ड तक बने रहें।
3. पुनः लौटने के लिए अपने मस्तक, हाथों, ठोड़ी और वक्षःस्थल को ऊपर की ओर उठाएँ तथा वज्रासन में बैठ जाएँ।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	नितम्बों को यथासम्भव एड़ियों पर रखें।	1.	झटके से नीचे की ओर न झुकें।
2.	आसन के दौरान श्वास-प्रश्वास सामान्य रखें।		

लाभ -

- यह मधुमेह एवं साइटिका जैसे रोगों में लाभदायक सिद्ध होता है।
- इसके अभ्यास से अतःस्रावी ग्रन्थियाँ विशेषतः अधिवृक्क ग्रन्थि एवम् अग्न्याशय की कार्यप्रणाली सुचारु होती है।
- उदरीय एवं श्रोणी प्रदेश में रक्त सञ्चरण को समुचित बनाता है एवं लीवर, किडनी आदि अङ्गों के स्वास्थ्य हेतु लाभदायक आसन है।

सीमाएँ -

- पीठ दर्द, घबराहट एवं सरवाइकल स्पाण्डलाइटिस (Cervical Spondylitis) से पीड़ित लोग इस आसन का अभ्यास न करें।

➢ **भुजङ्गासन**

अङ्गुष्ठनाभिपर्यन्तमधोभूमौ च विन्यसेत्।
धरां करतलाभ्यां धृत्वोर्ध्वशीर्षं फणीव हि॥
देहाग्निर्वर्द्धते नित्यं सर्वरोगविनाशनम् ।
जागर्ति भुजङ्गीदेवी भुजङ्गासनसाधनात् ॥

पैरों के अँङ्गुष्ठों से नाभिपर्यन्त शरीर को भूमि पर रखें और हथेलियों को भी भूमि पर टिकाकर सिर को सर्प की भाँति ऊँचा उठा लें। यह भुजङ्गासन कहलाता है। यह आसन जठराग्नि को बढ़ाने वाला और सब रोगों का नाशक है। इसकी सिद्धी से कुण्डलिनी-शक्ति का जागरण होता है।

- घेरण्डसंहिता - 2.42 - 43

संस्कृत-भाषा में शब्द 'भुजङ्ग' का अर्थ 'सर्प' होता है। इस आसन की अन्तिम-अवस्था में शरीर की स्थिति सर्प के समान प्रतीत होती है, अतः इसे भुजङ्गासन के नाम से जाना जाता है।

भुजङ्गासन

भुजङ्गासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें –

1. पेट के बल लेट जाएँ एवं मस्तक को भूमि पर स्पर्श कराएँ, पैरों को मिलाकर रखें।
2. दोनों हाथों को मोड़कर हथेलियों को कन्धों के समीप भूमि पर रखें तथा कोहनियों को शरीर से चिपकाकर रखें ।
3. धीरे-धीरे श्वास लेते हुए सिर, गर्दन एवं कन्धों को ऊपर की ओर उठाएँ। कन्धों को पीछे की ओर फैलाकर रखें।
4. धड़ को नाभि तक उठाएँ और ठोड़ी को यथासम्भव ऊपर की ओर उठाते हुए आकाश की ओर देखें। इस अवस्था में 10 से 15 सेकण्ड बने रहें।
5. पुनः लौटने के लिए नाभि, वक्षःस्थल, कन्धे, गर्दन एवं मस्तक को धीरे-धीरे नीचे की ओर लायें।
6. मस्तक को भूमि पर टिकाकर हाथों को खोलते हुए जङ्घाओं के समीप रख लें एवं विश्राम करें।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	ऊपर की ओर उठते हुए श्वास लेवें।	1.	शरीर को झटका देते हुए न उठाए।

लाभ -

- यह आसन लीवर और किडनी के लिए लाभदायक है ।
- भुजङ्गासन अन्तःस्रावी प्रणाली को सुचारु करके एड्रेनल ग्रन्थि (Adrenal gland) एवम् अग्न्याशय (Pancreas) को स्वस्थ करता है अतः यह तनाव-प्रबन्धन में विशेष लाभदायक होता है।
- यह मेरुदण्ड को सुदृढ, स्वस्थ एवं लचीला बनाता है ।
- घेरण्डसंहिता (श्लोक 2.43) के अनुसार यह जठराग्नि को स्वस्थ करके सभी रोगों का नाश करता है तथा कुण्डलिनी-साधना में विशेष उपयोगी माना गया है।

सीमाएँ -

- हर्निया एवं पेट के रोगों में इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए ।

➢ **शलभासन**

अध्यास्य शेते करयुग्मवक्ष आलम्ब्य भूमिं करयोस्तलाभ्याम्।

पादौ च शून्ये च वितस्ति चोर्ध्वं वदन्ति पीठं शलभं मुनीन्द्राः॥

पेट के बल लेट कर दोनों हाथों की हथेलियों को वक्ष: स्थल के समीप भूमि पर स्थापित रखें। इस स्थिति में पैरों को वितस्तिमात्र ऊपर की ओर उठाना है। मुनीन्द्रों द्वारा यह शलभासन कहा गया है।

- घेरण्डसंहिता - 2.39

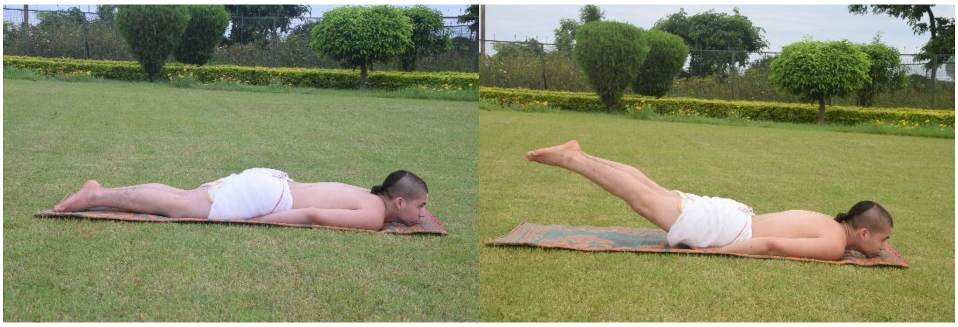

संस्कृत में 'शलभ' का तात्पर्य- 'टिड्डी' से होता है। इस आसन में शरीर की आकृति टिड्डी के समान दिखाई देती है। अतः इसे शलभासन कहा जाता है।

शलभासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. पेट के बल लेटकर शरीर को सीधा रखें, ठोढ़ी को भूमि पर टिकाएँ तथा भुजाओं को सीधा रख पैरों को एक-दूसरे से मिलाकर रखें।
2. दोनों हथेलियों को जङ्घाओं के नीचे रखें, अब श्वास लेते हुए हाथों के सहारे यथासम्भव अपने दोनों पैरों को भूमि से ऊपर उठाएँ। 5 से 10 सेकण्ड इसी स्थिति में बने रहें।
3. पुनः लौटने के लिये श्वास छोड़ते हुए दोनों पैरों को भूमि पर ले आएँ, हाथों को जङ्घा के नीचे से निकाल कर सिर को सामान्य-अवस्था में ले आएँ एवं विश्राम करें।

करने योग्य		**न करने योग्य**	
1.	पैरों को सीधा रखें।	1.	हाथों पर अत्यधिक जोर ना पड़ने दें।
2.	शरीर का भार हाथों पर सन्तुलित रखें।	2.	पैरों को यथाशक्ति ऊपर उठायें।

लाभ -

- इसके अभ्यास से पीठ के निचले भाग में होने वाली पीड़ा में लाभ प्राप्त होता है।
- इसका अभ्यास जङ्घाओं और पेट के आस-पास जमा हुए अतिरिक्त वसा (चर्बी) को घटाने में सहायक है। कमर को भी लचीला बनाता है।
- यह शारीरिक एवं मानसिक सन्तुलन तथा सामाञ्जस्य की वृद्धि में सहायक है।
- इसके अभ्यास से एकाग्रता में वृद्धि होती है।

सीमाएँ -

- अल्सर, रक्तचाप, हृदय-रोग एवं हर्निया से पीड़ित व्यक्तियों को इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिये।

➢ **मकरासन**

अध्यास्य शेते हृदयं निधाय, भूमौ च पादौ प्रसार्यमाणौ ।

शिरश्च धृत्वा करदण्डयुग्मे, देहाग्निकारं मकरासनं तत्॥

पेट के बल लेटकर दोनों पैरों को भूमि पर फैलाते हैं तथा सिर को हाथों पर रखते है। इस अवस्था में अपने शरीर को शिथील छोड़ देते हैं। यह शरीरस्थ अग्नि को बढ़ाने वाला मकरासन है।

- घेरण्डसंहिता - 2.39

मकरासन शिथिलीकरण की श्रेणी के आसन में आता है । इस आसन में शरीर की आकृति मकर (मगरमच्छ) के समान प्रतीत होती है अतः इसे मकरासन कहा जाता है।

मकरासन के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें –

1. पेट के बल लेट जाएँ एवं पैरों को थोड़ी दूरी पर रखें, एड़ियों को अन्दर की ओर तथा पंजों को बाहर की तरफ रख लेवें।
2. भुजाओं को मोड़ते हुए हाथों की हथेलियों को क्रमशः विपरीत कोहनियों पर रखें।
3. सिर को दोनों हाथों के ऊपर रखकर सामान्य-रूप से श्वास-प्रश्वास लें।
4. पुनः लौटने के लिए दोनों हाथों को क्रमश: सीधा करते हुए बायाँ हाथ बायीं ओर तथा दायाँ हाथ दायीं ओर ले जाएँ। पैरों के बीच की दूरी को कम करते हुए प्रारम्भिक चरण में लौट आएँ।

करने योग्य		**न करने योग्य**	
1.	शरीर को आसन के अभ्यास के दौरान सीधा रखें।	1.	वक्षःस्थल को जमीन पर न रखें, जिससे श्वास लेना असहज हो जाए।

लाभ -

- यह पूरे शरीर में रक्त-सञ्चार को सुव्यवस्थित करता है।
- यह श्वसन-अङ्गों एवं पाचन-प्रक्रिया के लिए भी अति लाभदायी है।
- यह शरीर और मन दोनों को विश्रान्ति प्रदान करता है एवं चिन्ता एवं तनाव को कम करता है।

सीमाएँ -

- जिन्हें अधिक वजन, हृदय-रोग, घबराहट जैसी समस्या हों, वे मकरासन का अभ्यास न करें ।

प्रश्नावली

प्र.1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. सूर्यनमस्कार की तृतीय स्थिति का मन्त्र 'ॐ .... नमः' है। (मित्राय / सूर्याय)
2. कपालभाति को .... की श्रेणी में रखा गया है। (षट्क्रिया / प्राणायाम)
3. .... एक ध्यानात्मक आसन है। (भुजङ्गासन / पद्मासन)
4. पीठ दर्द में .... का अभ्यास नहीं करना चाहिए। (भुजङ्गासन/हलासन)
5. शीतली-प्राणायाम .... में करना चाहिए। (शीतऋतु / ग्रीष्मऋतु)

प्र.2. निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनिएँ –

1. आसन करने से लाभ है -

   अ. जठराग्नि स्वस्थ होना　　ब. शारीरिक दक्षता का विकास

   स. स्वास्थ्य लाभ　　द. उपरोक्त सभी

2. सूर्य नमस्कार की सातवीं स्थिति में किस चक्र पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है–

   अ. मणिपुर चक्र　　ब. विशुद्धि चक्र

   स. स्वाधिष्ठान चक्र　　द. आज्ञा चक्र

3. निम्न में से किस प्राणायाम को ग्रीष्म ऋतु में करना उपयुक्त है-

   अ. उज्जायी प्राणायाम　　ब. शीतली प्राणायाम

   स. सूर्यभेदी प्राणायाम　　द. भस्त्रिका प्राणायाम

4. प्राणायाम का सही अर्थ है-

   अ. श्वासों को रोकना　　ब. श्वासों को छोड़ना

   स. श्वासों को रोकना व छोड़ना　　द. श्वासों का नियमन व नियन्त्रण करना

5. प्राणायाम करने से लाभ है –

   अ. फैफड़े स्वस्थ व विकसित होना　　ब. ध्यान लगाने में सहायता मिलना

   स. नाड़ियों में निर्मलता आना　　द. उपरोक्त सभी

प्र. 3. सही जोड़िया बनाईए

1.	ध्यान	प्राणायाम
2.	गरूडासन	यौगिक आहार
3.	सुश्रुत संहिता	एकाग्रतावर्द्धक
4.	सात्विक आहार	आयुर्वेदिक ग्रन्थ
5.	शीतली	शरीर सन्तुलनात्मक आसन

प्र.4. निम्नलिखित वाक्यों में से सत्य/असत्य चुनिएँ -

1. वज्रासन का अभ्यास भोजन के पश्चात् भी किया जा सकता है। (सत्य / असत्य)
2. सूर्यनमस्कार में आठ स्थितियाँ होती हैं। (सत्य / असत्य)
3. पवनमुक्तासन से वात-रोगों का शमन होता है । (सत्य / असत्य)
4. शवासन शिथिलीकरण के आसनों की श्रेणी में आता है। (सत्य / असत्य)
5. अनुलोम-विलोम में जोर लगाकर श्वासों को छोड़ा जाता है। (सत्य / असत्य)
6. व्यक्तित्व-विकास में योग की अति उपयोगिता है। (सत्य/असत्
7. जीवनचर्या में दिवस, रात्रि एवम् ऋतु-रूप में तीन घटक सम्मिलित हैं। (सत्य/असत्य)
8. नाड़ीशोधन प्राणायाम में कुम्भक नहीं लगाया जाता। (सत्य/असत्य)
9. शीतली प्राणायाम शीतऋतु का अभ्यास है। (सत्य/असत्य)
10. ध्यान का अभ्यास शरीर एवं मन को विश्रान्ति प्रदान करता है। (सत्य/असत्य)

प्र.5. निम्नलिखित अतिलघु-उत्तरीय प्रश्नों का उत्तर दीजिए -

1. सूर्य नमस्कार की सप्तम स्थिति में निहित मन्त्र लिखिए ?
2. कपालभाति योग के किस अभ्यास में निहित है?
3. प्राणायाम के दो लाभ लिखिए ?
4. एकाग्रतावर्द्धक योग के अभ्यासों के नाम लिखिए ?

प्र.6. निम्नलिखित लघु-उत्तरीय प्रश्नों का उत्तर दीजिए -

1. आसनों के अभ्यास हेतु पाँच महत्त्वपूर्ण दिशानिर्देश लिखिए ?
2. सूर्यनमस्कार के सभी चरणों के नाम एवं हर स्थिति में प्रयुक्त होने वाले मन्त्रों को लिखिए ?

3. आसनों के अभ्यास के दौरान आपने शरीर एवं मन के भीतर किन-किन परिवर्तनों को अनुभव किया ? लिखिए ।

4. हठयोग-सिद्धि के लक्षणों को लिखिए ?

5. एकाग्रता बढाने वाले आसनों के नाम लिखिए ?

6. भ्रामरी एवं शीतली-प्राणायाम के लाभ बताइए ?

7. सम्यक् दीनचर्या में प्रयुक्त अङ्गों के नाम लिखिए ?

8. व्यक्तित्व के कितने पक्ष है ? नाम लिखिए।

9. विरुद्ध आहार से क्या तात्पर्य है ?

प्र.7. निम्नलिखित दीर्घ-उत्तरीय प्रश्नों का उत्तर दीजिए -

1. आसन से आप क्या समझते हैं ? आसन से होने वाले लाभों का वर्णन कीजिए ?

2. प्राणायाम का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए ? अनुलोम-विलोम प्राणायाम से होने वाले लाभों को लिखिए ?

3. योग का सम्पूर्ण स्वास्थ्य के सन्दर्भ में महत्त्व को समझाइए ?

4. व्यक्तित्व की अवधारणा को समझाते हुए, व्यक्तित्व के विभिन्न घटकों के सन्दर्भ में योग की महत्ता को स्पष्ट कीजिए ।

5. स्वस्थवृत्त को समझाते हुए, सङ्क्षिप्त में आयुर्वेदोक्त सम्यक् जीवनचर्या का वर्णन कीजिए ?

परियोजना-कार्य

❖ योगासनों का एक चार्ट बनाएँ, जिसमें आसनों के चित्र लगाएँ एवम् उनसे होने वाले लाभों को लिखें।

❖ निरन्तर एक माह तक 15 मिनट ध्यान का अभ्यास करें, तत्पश्चात् मानसिक एवं शारीरिक-स्तर पर अनुभूत हुए परिवर्तनों का आंकलन कर एक रिपोर्ट तैयार कीजिये ?

अध्याय - षष्ठ

प्राणायाम एवं षट्कर्म अभ्यास

> **हम अध्ययन करेंगे-**
>
> **6.1 प्राणायाम – परिचय एवं परिभाषा**
>
> **6.2 प्राणायाम का महत्त्व एवम् उपयोगिता**
>
> **6.3 प्राणायाम के नियम**
>
> **6.4 प्राणायाम अभ्यास - नाड़ीशोधन प्राणायाम, भ्रामरी प्राणायाम, शीतली प्राणायाम**
>
> **6.5 षट्कर्म – कपालभाति, त्राटक, अग्निसार**

6.1 प्राणायाम – परिचय एवं परिभाषा

अष्टाङ्गयोग-साधना में प्राणायाम चतुर्थ स्थान पर निहित है। प्राणायाम 'प्राण' अथवा श्वसन-प्रक्रिया को नियन्त्रित एवं सुव्यवस्थित करने का अभ्यास है, जिससे न केवल शरीर को स्वस्थ किया जा सकता है, बल्कि मन एवम् इन्द्रियों को भी स्वस्थ किया जा सकता है।

योगदर्शन के अनुसार प्राणायाम को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया गया है -

तस्मिन्सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः॥

आसन की सिद्धि के पश्चात् श्वास और प्रश्वास की गति का नियन्त्रण हो जाना ही प्राणायाम कहा गया है।

– योगदर्शन 2.49

प्राणायाम शब्द, दो शब्दों 'प्राण' एवम् 'आयाम' से मिलकर बना है। प्राण से आशय, शरीर में व्याप्त पञ्चप्राण - प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान अथवा प्राणवायु से है। वहीं आयाम का अर्थ नियन्त्रण, नियमन, विस्तार आदि से है। इस प्रकार प्राणायाम का संयुक्त अर्थ बनता है- प्राण अथवा श्वास-प्रश्वास का नियमन, नियन्त्रण एवं विस्तारण करना।

6.2 प्राणायाम का महत्त्व एवम् उपयोगिता -

प्राणायाम श्वास-प्रश्वास का एक महत्त्वपूर्ण उपयोगी विज्ञान है। इसके द्वारा शरीर के विभिन्न अङ्गों को स्वस्थ व पुष्ट बनाया जा सकता है। शरीर के महत्त्वपूर्ण भागों, जैसे - फेफड़ों, हृदय, मस्तिष्क,

शिरा-धमनियों एवं समस्त नाड़ियों में रहने वाली विकृतियों (मलों) का प्राणायाम के द्वारा शोधन किया जा सकता है। प्राणायाम (पूरक, कुम्भक, रेचक) के माध्यम से मस्तिष्क एवं फेफड़ों में पर्याप्त मात्रा में आक्सीजन पहुँचाकर उन्हें शुद्ध स्वस्थ एवं परिपुष्ट बनाया जा सकता है। इस प्रकार शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य एवं दीर्घायु की दृष्टि से प्राणायाम बहुत ही उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण योगाभ्यास है।

6.3 प्राणायाम के नियम -

- प्राणायाम साफ-सुथरे हवादार समतल स्थल पर किया जाना चाहिए। आसन हेतु कम्बल, ऊनी, सूतीवस्त्र, रेशमीवस्त्र, कुशा आदि का उपयोग करना चाहिए।
- प्राणायाम के लिये पद्मासन, सिद्धासन, वज्रासन या सुखासन में बैठना उपयुक्त है। अभ्यास तनावमुक्त होकर, एकाग्रभाव से करना चाहिये। मन शान्त एवं प्रसन्न रखें।
- प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होकर बिना कुछ आहार किये प्राणायाम करें। शुरू में 10-15 मिनिट के लिये ही अभ्यास करें, परन्तु बाद में धीरे-धीरे इसे बढ़ावें।
- प्राणायाम हठपूर्वक या गलत विधि से नहीं करना चाहिये। योग्य गुरु से शिक्षा लेकर और उनके मार्गदर्शन में ही करना चाहिये। प्राणायाम के अभ्यास करते समय मेरुदण्ड, गर्दन, कमर, सिर, सदा ही सीधा और सहज-रूप में रखना चाहिये। साथ ही नाक, कान, आँख, मुँह आदि अङ्गों पर किसी प्रकार का तनाव अथवा दबाव न रखकर सहज रूप से रखना चाहिये।
- प्राणायाम साधक को सात्त्विक आहार लेना, युक्तियुक्त विहार करना और सत्कर्मों में चेष्टा करनी चाहिये। अभ्यासी को न अधिक जागरण करने वाला और न अधिक सोकर देरी से उठने वाला होना चाहिये।

6.4 प्राणायाम अभ्यास-

➢ **नाड़ीशोधन प्राणायाम -**

बद्धपद्मासनो योगी प्राणं चन्द्रेण पूरयेत् ।
धारयित्वा यथाशक्ति भूयः सूर्येण रेचयेत् ॥
प्राणं सूर्येण चाकृष्य पूरयेदुदरं शनैः ।
विधिवत् कुम्भकं कृत्वा पुनश्चन्द्रेण रेचयेत् ॥

नाड़ीशोधन प्राणायाम के अभ्यास हेतु पद्मासन में बैठकर बायें नासिका स्वर (चन्द्रनाड़ी) के द्वारा श्वास लेते हुए यथाशक्ति धारण (अन्तः कुम्भक) करें तथा दायें नासिका स्वर (सूर्यनाड़ी) के द्वारा शनैः शनैः श्वास को बाहर की ओर छोड़ें। इसी प्रकार दायें नासिका स्वर के द्वारा ही शनैः शनैः श्वास लेते हुए पुनः यथाशक्ति कुम्भक करें तथा बायें नासिका स्वर से शनैः शनैः श्वास छोड़ें।

- हठप्रदीपिका 2.7-8

इस प्राणायाम के अभ्यास से शरीर में व्याप्त, नाडियों एवं नसों में जमा मल एवं विषाक्त पदार्थों का निष्कासन हो जाता है एवं सभी नाड़ियों का शुद्धिकरण हो जाता है। अतः इसे नाड़ी शोधन प्राणायाम कहा जाता है। नाड़ीशोधन के अभ्यास में अन्तःकुम्भक (वायु को यथासम्भव भीतर रोकना) लगाने का विधान किया जाता है ,वहीं अनुलोम-विलोम के अभ्यास में केवल श्वास-प्रश्वास की क्रिया पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। यहाँ हम नाड़ीशोधन- प्राणायाम-विधि का अध्ययन करेंगे।

नाड़ीशोधन प्राणायाम के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. पद्मासन या अन्य किसी ध्यानात्मक आसन में बैठ जाएँ। मेरुदण्ड ,गर्दन एवं सिर को सीधा रखें।
2. बाएँ हाथ की हथेलियों से ज्ञान-मुद्रा बनाकर बाएँ घुटने पर रख लेवें तथा दाएँ हाथ की हथेलियों से नासिका (प्रणव)-मुद्रा बनाएँ। नासिका (प्रणव)-मुद्रा (चित्र में दर्शायी गई) बनाने के लिए अनामिका और कनिष्ठा अँङ्गुलियों को बायीं नासिका स्वर पर रखते हुए मध्यमा एवं तर्जनी अँङ्गुली को मोड़ें तथा दाएँ नासिका स्वर पर अँङ्गूठे को रखें।
3. धीरे-धीरे बायें स्वर (चन्द्र स्वर) से श्वास भरते हुए यथासम्भव वायु को शरीर के भीतर रोकने (अन्त: कुम्भक) का प्रयास करें।

4. अब बायें स्वर को अनामिका तथा कनिष्ठा अँङ्गुलियों के द्वारा बन्द करें, अँङ्गूठे को दाईं नासिका स्वर (सूर्य स्वर) से हटा लें और धीर-धीरे दाएँ स्वर से श्वास को बाहर छोड़कर यथासम्भव बाह्य कुम्भक हेतु प्रयास करें।

5. अब दाएँ स्वर से ही श्वास भरते हुए वायु को तब तक शरीर के अन्दर रखें, जब तक श्वास छोड़ने की चेष्टा न हो। तत्पश्चात् पुनः दायें स्वर को अँङ्गूठे से बन्द करते हुए बायीं नासिका स्वर से श्वास छोड़ दें ।

6. यह नाड़ीशोधन-प्राणायाम का एक चक्र हुआ। इसे यथासम्भव पाँच से दस बार दोहराएँ।

नोट - नाड़ीशोधन-प्राणायाम (कुम्भक सहित) से पूर्व अनुलोम-विलोम प्राणायाम (कुम्भक-रहित सामान्य श्वास-प्रश्वास-क्रम) के अभ्यास को दृढ़ कर लेवें, ताकि प्राण को नियन्त्रित करने की क्षमता का विकास हो जाए। जिससे नाड़ी शोधन प्राणायाम के दौरान अन्तःकुम्भक (भीतर श्वास रोकने की क्रिया) का सामर्थ्य प्राप्त हो जाएँ । अतः शुरुआत में अनुलोम विलोम (कुम्भकरहित सामान्य श्वास-प्रश्वास-क्रम) का ही अभ्यास करें।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	श्वास-प्रश्वास का क्रम सहजतापूर्ण रखें ।	1.	श्वास रोकने हेतु बलपूर्वक चेष्टा न करें। अतः शुरुआत में केवल अनुलोम-विलोम- प्राणायाम का ही अभ्यास करें ।
2.	श्वास-प्रश्वास का अनुपात 1:2 रखें, यथाशक्ति अन्तःकुम्भक लगाएँ।	2.	श्वास को वेग से बाहर न छोड़ें।
3.	हठयोग से सम्बन्धित ग्रन्थों में रेचक-कुम्भक- पूरक का अनुपात 1:4:2 बताया गया है।	3.	नासिका-स्वरों पर अनावश्यक दबाव न डालें।

लाभ -

- इस प्राणायाम का मुख्य लाभ यह है कि इसके अभ्यास से सम्पूर्ण शरीर के अङ्गों एवं नाड़ीमण्डल का शुद्धिकरण हो जाता है। शरीर में शुद्ध ऑक्सीजनयुक्त रक्त का सञ्चरण होता है , जिससे शरीर को पोषण एवं स्वास्थ्य लाभ मिलता है।
- मस्तिष्क में रक्त की आपूर्ति कर एकाग्रता एवं मन की निश्चलता को बढ़ाने में सहायक है।
- सभी अङ्गों की कार्य प्रणाली को सुचारु बनाता है। तनाव तथा चिन्ता के स्तर को भी कम करता है।
- अस्थमा एवम् अन्य श्वसन रोग, रक्तचाप, अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के असन्तुलित क्रियाओं, अनिद्रा आदि में अत्यन्त लाभदायक।
- कफ-विकार को कम करने में भी सहायक सिद्ध होता है।

हठयोगप्रदीपिका के अनुसार (श्लोक 2.19-20), जब नाड़ीशोधन के द्वारा सभी नाड़ियाँ शुद्ध एवं निर्मल हो जाती हैं, तब निम्नलिखित लक्षण दिखाई देने लगते हैं -

1. शरीर निश्चित रूप से पतला एवं कान्तिमान् हो जाता है।
2. साधक का प्राणों एवं कुम्भक आदि प्रक्रिया पर नियन्त्रण हो जाता है ।
3. जठराग्नि एवम् आरोग्य लाभ प्राप्त होता है एवम् आध्यात्मिक लाभ के रूप में नाद का अनुभव होना बताया है।

सीमाएँ -

- शुरुआत में श्वास-प्रश्वास रोकने की प्रक्रिया से बचें, केवल सामान्य श्वास-प्रश्वास के साथ ही अभ्यास करें।

हठयोगप्रदीपिका (श्लोक 2.16) के अनुसार, सही रूप से प्राणायाम का अभ्यास करने से सभी रोग नष्ट हो जाते हैं एवं गलत रीति से करने पर हिचकी, दमा, खाँसी आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतः सहजतापूर्वक एवम् उचित रीति से श्वास लें। यथाशक्ति कुम्भक लगाएँ एवं सहजतापूर्वक श्वास छोड़ें।

➢ **भ्रामरी प्राणायाम -**

वेगाद् घोषं पूरकं भृङ्गनादं भृङ्गीनादं रेचकं मन्दमन्दम् ।

योगीन्द्राणामेवमभ्यासयोगात् चित्ते जाता काचिदानन्दलीला ॥

वेग से भ्रमर- गुञ्जन की भाँति ध्वनि करते हुए पूरक करना चाहिये । तत्पश्चात् भ्रमरी के गुञ्जन की भाँति ध्वनि करते हुए शनैः शनैः रेचक करना चाहिये। इस विधिपूर्वक अभ्यास करने से उत्तम साधकों के चित्त में एक अपूर्व आनन्द की उत्पत्ति होती है ।

- हठप्रदीपिका - 2.68

'भ्रमर' एक संस्कृत शब्द है, जिसका अर्थ 'भौंरा' होता है । इसके अभ्यास में भ्रमर के समान गुञ्जन जैसी ध्वनि होती है, अतः इसे भ्रामरी-प्राणायाम कहा जाता है ।

भ्रामरी-प्राणायाम

भ्रामरी-प्राणायाम का अभ्यास निम्नलिखित निर्देशों का पालन करते हुए करें –

1. सुखासन में बैठकर लम्बी गहरी श्वास लें एवं नेत्रों को बन्द कर लेवें ।
2. दोनों हाथों के अँगूठे से कर्ण-छिद्रों को बन्द करके, दोनों हाथों की मध्यमा अँगुलियों को नेत्रों पर, दोनों तर्जनी को भौहों पर, दोनों अनामिका नासिका स्वर के पास तथा कनिष्ठा अँगुलियों को होठों के समीप रखें । इसे षण्मुखी-मुद्रा कहते हैं ।
3. अब धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए भ्रमर के समान मधुर गुञ्जन की आवाज निकालें। इस चक्र को 5 से 10 बार दोहराएँ ।
4. पुनः लौटने के लिए हाथों को उक्त स्थानों से हटाते हुए हथेली को घुटनों पर रख दें ।

करने योग्य		**न करने योग्य**	
1.	मेरुदण्ड एवं गर्दन सीधी रखें ।	1.	जोर से आवाजें न निकालें ।

2.	गुञ्जन की ध्वनि पर ध्यान केन्द्रित करें ।	2.	नेत्रों, नासिका स्वरों पर अनावश्यक दबाव न डालें ।
		3.	गुञ्जन के समय दन्त-पङ्क्तियों को न मिलावें ।

लाभ -

- एकाग्रता एवं तनाव-प्रबन्धन में सहायक ।
- मस्तिष्क एवं तन्त्रिका-तन्त्र के स्वास्थ्य हेतु लाभकारी ।
- उच्च रक्तचाप, अनिद्रा के निदान में सहायता करता है ।
- कण्ठस्वर को मधुर बनाता है एवं गले के रोगों में लाभदायक अभ्यास है ।

सीमा -

नाक व कान के सङ्क्रमण में भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

➢ **शीतली प्राणायाम**

जिह्वया वायुमाकृष्य पूर्ववत् कुम्भसाधनम् ।
शनकैर्घ्राणरन्ध्राभ्यां रेचयेत् पवनं सुधीः ॥

जिह्वा (को दोनों ओर से नली की भाँति मोड़कर) के द्वारा वायु भीतर खींचकर पूर्व की भाँति कुम्भक का अभ्यास करना चाहिए । पश्चात् बुद्धिमान् साधक को शनैः शनैः नासिका-छिद्रों द्वारा वायु को निष्कासित करना चाहिए ।

- हठयोगप्रदीपिका 2.57

शीतली का अर्थ 'शीतलता' से लिया जा सकता है । यह प्राणायाम, मन एवं शरीर को शान्ति और शीतलता प्रदान करता है । अतः शीतली प्राणायाम कहा जाता है ।

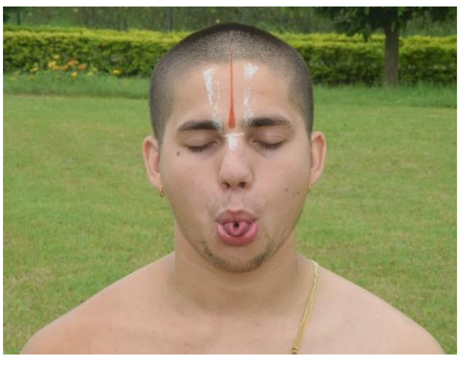

शीतली प्राणायाम

शीतकारी प्राणायाम के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. सर्वप्रथम पद्मासन में बैठ जाएँ।
2. मुँह को खोले तथा जिह्वा को बाहर निकालें। अब जिव्हा को किनारों से नली के समान मोड़कर श्वास को अन्दर लीजिये। फेफड़ों में पूरी तरह श्वास को भरकर रखें।
3. जिह्वा को पुन: अन्दर की ओर स्थापित कर मुख को बन्द कर लें।
4. अब नाक से श्वास को छोड़ें। इसी क्रिया का अभ्यास 5 बार दोहराएँ।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	शीतलता की अनुभूति पर ध्यान बनाकर रखें।	1.	प्रदूषित वातावरण में शीतली का अभ्यास न करें।
		2.	शीतकाल में इसे न करें।

लाभ -

- उच्च रक्तचाप एवं ज्वर की स्थिति में लाभदायक।
- शरीर में शीतलता प्रदान करता है तथा मन को चिन्ता एवं तनाव से मुक्त करता है।
- नेत्रों के स्वास्थ्य के लिए लाभदायक।
- हठयोगप्रदीपिका (श्लोक 2.58) के अनुसार वायुगोला, तिल्ली, ज्वर, पित्त, भूख, प्यास की असहनशीलता आदि में लाभदायी अभ्यास है। सभी प्रकार के रोग एवं विष (शरीर के विषाक्त पदार्थों) का नाश करने वाला बताया गया है।

सीमाएँ -

➢ निम्नरक्तचाप, कफ, टॉन्सिलाइटिस तथा श्वसनी शोथ (Bronchitis) के मरीजों को यह प्राणायाम नहीं करना चाहिए।

6.5 षट्कर्म -

उपनिषदों एवं योग से सम्बन्धित शास्त्रों में हठ-योग के वर्णन के अन्तर्गत षट्कर्म का भी वर्णन किया गया है। षट्-क्रियाओं का उद्देश्य शरीर से विषाक्त पदार्थ को बाहर निकालना है। अतः इन्हें शुद्धिकरण की क्रियाएँ भी कहा जाता है। हठयोग की तरह षट्-क्रियाएँ भी इड़ा (चन्द्रस्वर) एवं पिङ्गला

(सूर्यस्वर) नाड़ियों के मध्य सामञ्जस्य एवं मानसिक तथा शारीरिक-स्वास्थ्य हेतु विशेष लाभदायक है। इस अध्याय में हम षट्-क्रियाओं में से एक 'कपालभाति' का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

➢ **कपालभाति**

भस्त्रावल्लोहकारस्य रेचपूरौ ससम्भ्रमौ ।

कपालभातिर्विख्याता कफदोषविशोषणी ॥

लुहार की धौंकनी की भाँति शीघ्रता से रेचक-पूरक करने से कपालभाति होती है। यह कफ दोषों का शमन करने वाली है।

- हठयोगप्रदीपिका 2.36

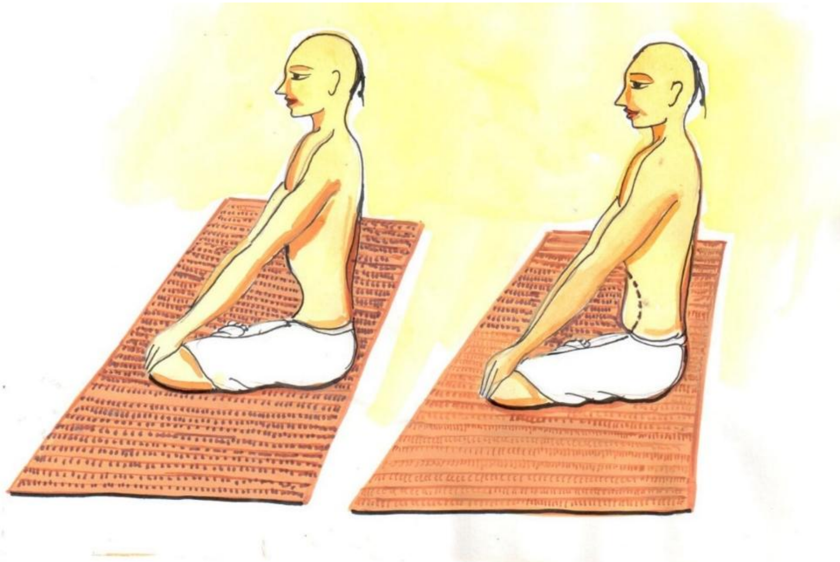

कपालभाति

कपालभाति के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें –

1. सर्वप्रथम पद्मासन अथवा अन्य किसी ध्यानात्मक आसन में बैठ जाएँ ।
2. नासिका से गहरी लम्बी श्वास लें एवं मेरुदण्ड को सीधा रखें ।
3. अब बल पूर्वक श्वास को इस प्रकार बाहर निकालें कि उदर-क्षेत्र का निचला हिस्सा (Pelvic region) पूर्णरूप से सिकुड़ जाए।
4. इसी प्रकार सहज-भाव से श्वास को बाहर छोड़ते रहें। श्वास लेने का प्रयास न करें, वह स्वतः ही शरीर में प्रवेश करेगी। अतः केवल श्वास छोड़ने (रेचन) हेतु चेष्टा करें।

5. इस प्रकार उदर की माँसपेशियों को दबावपूर्वक अन्दर-बाहर करते हुए श्वास छोड़ें। आरम्भ में इस प्रकार से 20 से 25 आवृत्तियों का अभ्यास तीन बार करें। तत्पश्चात् धीरे-धीरे अभ्यास के साथ आवृत्तियों एवं चक्रों की सङ्ख्या को बढ़ावें।

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	मेरुदण्ड, गर्दन एवं सिर सीधा रखें।	1.	श्वास छोड़ते समय नासिका- स्वरों पर अतिरिक्त दबाव न डालें।
2.	सहजतापूर्वक एवं यथाशक्ति ही अभ्यास करें।	2.	अभ्यास करते समय वक्षःस्थल एवं कन्धों को ना हिलायें।

लाभ -

- यह उदरीय भाग के स्नायुओं तथा मांसपेशियों को स्वस्थ्य बनाता है। साथ ही पाचन प्रक्रिया हेतु लाभदायक अभ्यास है।
- शरीर के विषाक्त पदार्थों का निष्कासन कर कफविकार, जुकाम, साइनोसाइटिस, अस्थमा एवं श्वसन-तन्त्र के रोगों में लाभदायक है।
- शरीर में व्याप्त कार्बन-डाई-ऑक्साइड तथा अपशिष्ट गैसों को बाहर निकालता है एवं रक्त-सञ्चार को बेहतर बनाता है।
- तन्त्रिका-तन्त्र को मजबूत बनाकर आलस्य को दूर करता है।स्फूर्ति व एकाग्रता बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध होता है। सम्पूर्ण शरीर एवं मस्तक पर कान्ति, तेज, ओज में वृद्धि करता है।

सीमाएँ -

- उच्च रक्तचाप, चक्कर आना, हृदय-रोग, श्वसन-नली एवं पेट का अल्सर, पीठ एवं पेट दर्द, नासिका से रक्त-प्रवाह आदि रोगों में कपालभाति का अभ्यास न करें।

➢ **त्राटक क्रिया**

त्राटक हठयोगप्रदीपिका में वर्णित षट्कर्मों में से एक है। इसके अभ्यास से नेत्र-दृष्टि बढ़ती है तथा नेत्र के सभी विकार समाप्त होते हैं। अतः यह नेत्रों की शोधन-क्रिया कही जाती है। त्राटक के अभ्यास को योगसाधना हेतु सोने की पेटी के समान महत्त्वपूर्ण बताकर इसका नित्य अभ्यास एवं रक्षण करने को कहा है।

निरीक्षेन्निश्चलदृशा सूक्ष्मलक्ष्यं समाहितः ।

अश्रुसम्पातपर्यन्तमाचार्यैस्त्राटकं स्मृतम् ॥

स्थिर-दृष्टि से किसी सूक्ष्मलक्ष्य पर समाहित (एकाग्र) होकर तब तक देखते रहें, जब तक आँखों से अश्रु बाहर न आ जाएँ। आचार्यों ने इसे त्राटक कहा है ।

– हठयोगप्रदीपिका 2.32

पूर्व तैयारी –

एक जलते हुए दीपक अथवा मोमबत्ती को 2-3 फीट की दूरी पर इस प्रकार रखें कि मोमबत्ती की ज्योति आपकी आँखों के समानान्तर ऊँची हो। दीपक/मोमबत्ती के स्थान पर आप किसी ध्यान-बिन्दु, छोटा बल्ब इत्यादि का भी प्रयोग कर सकते हैं ।

त्राटक का अभ्यास निम्नलिखित निर्देशों का पालन करते हुए करें –

1. किसी भी स्वच्छ वातावरण वाले कमरे में पद्मासन, सुखासन में बैठ जाएँ एवम् अपनी रीढ़ की हड्डी, गर्दन, सिर एकदम सीधा रखें ।
2. तत्पश्चात् कमरे के सभी प्रकाशस्रोत बन्द कर नेत्रों को भी बन्द कर लें।
3. अब नेत्रों को खोलकर एकाग्र होकर दीपक/मोमबत्ती की ज्योति को तब तक देखते रहें, जब तक नेत्रों से अश्रु न बहने लग जाएँ ।
3. अब आँखों को बन्द करके अपने अन्तर्मनस् में थोड़ी देर उसी ज्योति- चित्र का अवलोकन करते रहे, फिर धीरे-धीरे नेत्र खोलें ।

त्राटक

करने योग्य		न करने योग्य	
1.	शरीर एकदम स्थिर रहें एवं पूरा ध्यान ज्योति पर ही रहे ।	1.	दीपज्योति हिलती हुई न रहे। इस हेतु खिड़की, पंखा आदि हवा के स्रोत न खोलें ।

लाभ –

- नेत्रों की सूक्ष्मतम नाड़ियों के शुद्धिकरण में लाभदायक अभ्यास है।
- नेत्र-ज्योति, एकाग्रता एवं स्मृति बढ़ाने में सहायक ।
- हठयोगप्रदीपिका में इसके लाभ का वर्णन **'मोचनं नेत्ररोगाणां तन्द्रदीनां कपाटकम्'** (श्लोक 2.33) अर्थात् नेत्ररोग, तन्द्रा (योगमार्ग के बाधक तत्त्व) आदि का नाश करता है, इस प्रकार किया गया है।

सीमाएँ –

- ग्लूकोमा एवं पुराने नेत्र-रोग की उपस्थिति में इसका अभ्यास न करें ।
- चक्कर आना एवं सम्बन्धित व्याधियों में इसका अभ्यास न करें ।

➢ **अग्निसार**

नाभिग्रन्थिं मेरुपृष्ठे शतवारं च कारयेत् ।
अग्निसारमियं धौतिर्योगिनां योगसिद्धिदा॥

नाभि-क्षेत्र को मेरुदण्ड की ओर पृष्ठीय भाग तक लगाएँ। अग्निसार नामक इस धौतिकर्म के द्वारा योगियों को योगसिद्धि प्राप्त होती है।

- घेरण्डसंहिता 1.19

चूँकि इस क्रिया के अभ्यास से शरीर की पाचन अग्नि का नियमन होता है, अतः इसे अग्निसार कहा जाता है।

वस्तुतः इस क्रिया का अभ्यास बैठकर भी किया जाता है। परन्तु खड़े होकर इसका अभ्यास ज्यादा सटीक एवं सहज-रूप से किया जा सकता है। अतः यहाँ हम खड़े होकर इसकी क्रिया-विधि का अध्ययन करेंगे।

अग्निसार के अभ्यास हेतु नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करें -

1. सर्वप्रथम पैरों को कन्धों के सीध की दूरी में रखते हुए खड़े हो जाएँ।
2. अब कमर को आगे की ओर झुकाते हुए घुटनों को थोड़ा मोड़े एवं दोनों हाथों की हथेलियों को घुटनों पर रखें।
3. अब श्वास को यथासम्भव बाहर छोड़ते हुए पेट की माँसपेशियों को शीघ्रता से सिकोड़ें एवं फैलाएँ। ऐसा 10 बार या क्षमतानुसार करें।
4. पुनः लौटने के लिए धीरे-धीरे श्वास लीजिए एवं सामान्य-अवस्था में फिर से खड़े हो जाएँ।

करने योग्य		**न करने योग्य**	
1.	क्षमतानुसार श्वास को रोकें एवम् अभ्यास करें।	1.	अभ्यास करते समय कन्धों एवं वक्षःस्थलों को न हिलाएँ।
2.	इसका अभ्यास भोजन के पूर्व ही करना चाहिए।	2.	पेट पर अत्यधिक दबाव न डालें।

लाभ -

- जठराग्नि को स्वस्थ करता है एवम् उदर प्रदेश की माँसपेशियों में रक्तसञ्चरण की वृद्धि करता है।
- शरीर में ऊर्जा एवं स्फूर्ति को बढ़ाता है।
- खिन्नता को कम करने में सहायक है।
- उदर रोगों को ठीक करता है एवं भूख बढ़ाता है।

सीमाएँ -

- पेट के अल्सर, हृदय-रोग, उच्च रक्तचाप, अतिसार की स्थिति में इसका अभ्यास न करें।
- ग्रीष्मऋतु में इसका अधिक अभ्यास न करें।

प्रश्नावली

प्रश्न 1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. कपालभाति को .... की श्रेणी में रखा गया है। (षट्क्रिया / प्राणायाम)
2. शीतली-प्राणायाम .... में करना चाहिए। (शीतऋतु / ग्रीष्मऋतु)
3. भ्रमर गुंजन की भाँति ध्वनि के साथ अभ्यास किए जाने वाला......... प्राणायाम है। (सूर्यभेदन/भ्रामरी)
4. कपालभाति .... के अन्तर्गत कहा गया है। (षड्क्रिया/प्राणायाम)

प्रश्न 2. निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनिएँ –

1. निम्न में से किस प्राणायाम को ग्रीष्म ऋतु में करना उपयुक्त है-

   अ. उज्जायी प्राणायाम ब. शीतली प्राणायाम

   स. सूर्यभेदी प्राणायाम द. भस्त्रिका प्राणायाम

2. प्राणायाम का सही अर्थ है-

   अ. श्वासों को रोकना ब. श्वासों को छोड़ना

   स. श्वासों को रोकना व छोड़ना द. श्वासों का नियमन व नियन्त्रण करना

3. प्राणायाम करने से लाभ है –

   अ. फैफड़े स्वस्थ व विकसित होना ब. ध्यान लगाने में सहायता मिलना

   स. नाड़ियों में निर्मलता आना द. उपरोक्त सभी

4. योगसूत्र के अन्तर्गत प्राणायाम का स्थान है –

   अ. प्रथम ब. द्वितीय स. तृतीय द. चतुर्थ

प्र.5. निम्नलिखित उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए -

1. कपालभाति योग के किस अभ्यास में निहित है?
2. प्राणायाम के दो लाभ लिखिए?
3. प्राणायाम के अभ्यास हेतु पाँच महत्त्वपूर्ण दिशानिर्देश लिखिए?
4. W.H.O. के अनुसार स्वास्थ्य की परिभाषा को लिखिए?
5. अनुलोम-विलोम तथा भ्रामरी के अभ्यास से होने वाले लाभ लिखिए?

6. प्राणायाम का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए? अनुलोम-विलोम प्राणायाम से होने वाले लाभों को लिखिए ?

7. कपालभाति को समझाते हुए उसके लाभों को लिखिए?

परियोजना-कार्य

❖ नित्य प्रतिदिन प्राणायाम का अभ्यास करें, तत्पश्चात् मानसिक एवं शारीरिक-स्तर पर अनुभूत हुए परिवर्तनों का आंकलन कर एक रिपोर्ट तैयार कीजिये ?

अध्याय – सप्तम्

आयुर्वेदोक्त जीवनचर्या

➢ **हम अध्ययन करेंगे-**

7.1 **परिचय**

7.2 **आहार**

7.3 **विरुद्ध आहार**

7.4 **विहार – दिनचर्या** (प्रातः ब्राह्ममुहुर्त में जागरण, नित्य शौचकर्म, दन्तधावन एवं जीह्वाशोधन, तेल-गण्डूष, नेत्रप्रक्षालन एवं मुखादिधावन, योगाभ्यास एवं व्यायाम, नस्य एवं तैलाभ्यङ्ग, नखकर्तन एवं क्षौरकर्म, स्नान), **रात्रिचर्या**

7.5 **सद्वृत्त (आचार, विचार, व्यवहार)**

7.1 परिचय

आज के परिप्रेक्ष्य में विद्यार्थियों में तनाव की समस्या दृष्टिगोचर हो रही है। अनियमित जीवनशैली, आधुनिक उपकरणों का अत्यधिक प्रयोग, टेलीविजन, इण्टरनेट आदि साधनों का दुरुपयोग, कुसङ्गति, अस्वस्थ प्रतियोगिता, दुर्व्यसनों की आदत आदि तनाव के मुख्य कारण माने जा सकते हैं । साथ ही किशोरावस्था में स्नायु-संस्थान एवं हार्मोन स्राव के असन्तुलन के कारण भी बालकों में अनेक सांवेगिक व्याधियों की उत्पत्ति हो जाती है, जिसमें-से तनाव भी एक है ।

यौगिक अभ्यासों के माध्यम से छात्रों की रचनात्मक क्षमताओं का विकास होता है जिससे तनाव की स्थितियों में भी छात्र पूर्ण सहजता एवं सकारात्मकता के साथ क्रियाशील बने रहते हैं । योग की व्यावहारिक उपचार विधियों के द्वारा असामान्य भावनात्मक समस्याओं का निदान किया जा सकता है ताकि छात्रों के व्यक्तित्व को उक्त विकारों से मुक्त किया जा सके । ऐसे अभ्यास किये जाएँ जिनके द्वारा पिनियल ग्रन्थि की भूमिका, मानसिक एवं प्राणिक ऊर्जा, तन्त्रिका तन्त्र, हार्मोन स्राव आदि की कार्यप्रणाली सुव्यवस्थित एवं सन्तुलित हो। योगाभ्यास के साथ-साथ संयमित जीवन-शैली, सदाचरण, कर्मयोग, यम एवं नियम का पालन आदि के माध्यम से छात्रों को सम्यक् जीवनशैली के निर्वहण हेतु प्रोत्साहित किया जा सकता है, जिससे तनाव- प्रबन्धन की समस्याओं का सहजता से सामना किया जा

सके। साथ ही ऐसे अभ्यास करवाए जाएँ जो एकाग्रतावर्धक हैं। विद्यार्थी जब अपने लक्ष्यों के प्रति स्थिर एवम् एकाग्र रहेंगे, तो अनावश्यक तनावजन्य वृत्तियों को त्यागकर नित्य सृजनात्मकता की ओर अग्रसर होते रहेंगे।

मूल-रूप से तनाव का कारण जीवनशैली की अनियमितता ही है। यह अनियमितता ही मानसिक-स्वास्थ्य को भी प्रभावित करती है। साथ ही सदाचरण का पालन न करना भी तनाव के मुख्य कारणों में माना जा सकता है। अतः शास्त्रोक्त जीवनचर्या एवं आचरण का पालन करना ही तनाव- प्रबन्धन एवम् अन्य दुःख-व्याधियों का समाधान माना जा सकता है। इस विषय में श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है कि

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।

युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥

जो मनुष्य समुचित (सन्तुलित) भोजन तथा भ्रमण करने वाला, कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाला एवं यथोचित निद्रा तथा जागरण करने वाला होता है, ऐसे योगी (साधक) के समस्त दुःखों का विनाश हो जाता है। - श्रीमद्भगवद्गीता 6.17

आयुर्वेद ग्रन्थों में भी समुचित भ्रमण एवं भोजन के साथ-साथ सद्वृत्त (सदाचरण) के पालन को भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है, जिसमें आचार, विचार, व्यवहार आदि पक्ष निहित हैं।

नित्यं हिताहारविहारसेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः ।

दाता समः सत्यपरः क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्यरोगः॥

नित्य हितकर भोजन एवं भ्रमण करने वाला, बुद्धीमत्ता से कार्य करने वाला, विषयों में आसक्ति न रखने वाला, दानी, हानि-लाभ में समान रहने वाला, सत्याचरण करने वाला, क्षमावान्, आप्तपुरुषों के लिए सेवाभाव रखने वाला पुरुष सदा निरोगी रहता है। - अष्टाङ्गहृदयसूत्र 4.37

अतः तनाव प्रबन्धन हेतु सम्यक् आहार-विहार, सद्वृत्त (आचार, विचार, व्यवहार) की अत्यन्त महती भूमिका सिद्ध होती है ।

7.2 आहार

आहार मनुष्य-शरीर का पोषक एवं धारक माना गया है। आहार के बिना मनुष्य के जीवन की कल्पना असम्भव है क्योंकि आहार ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने शरीर का पोषण एवं ऊर्जा का सञ्चय करता है। योगाभ्यासी के लिए सदा मिताहार का पालन करना श्रेष्ठ माना गया है।

मिताहार से तात्पर्य पेट के अर्धभाग हेतु भोजन (सात्त्विक), एक चौथाई भाग पानी एवम् अन्य स्वास्थ्यवर्धक तरल पदार्थ जैसे फलों का रस, औषधीययुक्त जल इत्यादि एवम् एक चौथाई भाग वायु हेतु स्वतन्त्र प्रवाह से है।

आहार केवल शारीरिक-विकास ही नहीं वरन् मानसिक एवम् आध्यात्मिक पक्ष को भी अत्यन्त प्रभावित करता है। कहा भी गया है कि -

आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थिनां विप्रमोक्षः॥

आहार-शुद्धि के द्वारा सत्त्व (अन्तःकरण) की शुद्धि होती है, अन्तःकरण की शुद्धि के द्वारा निश्चल स्मृति प्राप्त होती है एवं निश्चल स्मृति (बुद्धि) के द्वारा सर्व दुःखों तथा बन्धनों से मुक्ति मिलती है।

- छान्दोग्योपनिषत् 7.26.2

हठयोगप्रदीपिका में भी आहार के सुपाच्य, सात्त्विक एवं पुष्टिकारक होने पर बल दिया गया है –

पुष्टं सुमधुरं स्निग्धं गव्यं धातुप्रपोषणम्।
मनोभिलषितं योग्यं योगी भोजनमाचरेत्॥

योगसाधक को पुष्टिकर, सुमधुर, स्निग्ध, गो दुग्ध से निर्मित भोज्य पदार्थ, धातु को समृद्ध करने वाले, मन के अनुकूल तथा सात्त्विक भोजन ही करना चाहिए।

- हठयोगप्रदीपिका 1.63

श्रीमद्भगवद्गीता में भी पथ्य-अपथ्य आहार के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा गया है –

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।
रस्याः स्निग्धाः स्थिराः हृद्याः आहाराः सात्त्विकप्रियाः ॥
कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।
आहाराः राजसस्येष्टाः दुःखशोकामयप्रदाः ॥
यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत् ।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ॥

आयु, प्रज्ञा (बुद्धि), बल, आरोग्य, सुख एवं प्रीति का वर्धन करने वाले, रसों से युक्त, स्निग्ध (चिकने) तथा स्थिर रहने वाले एवं स्वभाव से ही मन को प्रिय (आनन्दित करने वाले), यह सात्त्विक पुरुष को प्रिय सात्त्विक (पथ्य) आहार है । कटु, खट्टे, लवणयुक्त, अधिक उष्ण, तीक्ष्ण, शुष्क, दाहकारक

तथा दुःख, चिन्ता और रोगों को उत्पन्न करने वाले आहार, राजस-पुरुष को प्रिय आहार है । जो भोजन अधपका, रसहीन, दुर्गन्ध से युक्त, पर्युषित (बासी) एवम् उच्छिष्ट (झूठा) है एवं अपवित्र है, वह तामस-पुरुष को प्रिय तामसिक (अपथ्य) आहार कहा गया है । - श्रीमद्भगवद्गीता - 17.8-10

7.3 विरुद्ध आहार –

अर्थात् परस्पर विरोधी गुणधर्म वाले पदार्थों को एक साथ सेवन न करने की शिक्षा एवं सद्विवेक पूर्व में ही बालकों को दिया जाना चाहिए । जैसे बैंगन की सब्जी और खीर या दूध एक साथ न खाया जाये । उसी तरह शहद व घी बराबर मात्रा में मिलाकर सेवन न किया जाये, उड़द की दाल, मूली व दूध एक साथ एक बैठक में ग्रहण न किये जायें । आयुर्वेद के अनुसार ऐसी एक लम्बी सूची है, जिसे हर बच्चे, युवा, वृद्ध को याद रखनी चाहिये, ताकि विरुद्ध पदार्थों के सेवन से होने वाली स्वास्थ्य-हानि से बचा जा सके ।

इस प्रकार विद्यार्थियों को सदा, हल्का, सुपाच्य, ताजा, दोषरहित एवम् ऊर्जादायक, सात्त्विक भोजन करना सर्वोत्तम माना गया है।

निम्नाङ्कित तालिका के अनुसार दो विषयों की सूची बनाएँ –

1. वे भोज्य पदार्थ जो आपको प्रिय हैं।
2. वे भोज्य पदार्थ जो सुपाच्य एवं स्वास्थकर हैं।

भाग – 1	भाग – 2
जो भोज्य पदार्थ आपको प्रिय है	जो भोज्य पदार्थ स्वास्थ्यकारक है।
----------------	--------------
---------------	--------------

दोनों भागों का मिलान करके स्वास्थ हेतु हानिकारक भोज्य-पदार्थों को ग्रहण न करें; जो भाग 2 की सूची में नहीं आते।

7.4 विहार

आयुर्वेद में योगारूढ मनुष्यों के लिए नित्य बाह्य-जीवनोपयोगी कर्म एवं व्याधि-प्रतिबन्धित रखने के लिए जीवनचर्या, ऋतुचर्या, व्यायाम, स्वाध्याय, मनोरञ्जन, कला, शयन एवं सद्वृत्त के पालन को 'विहार' के नाम से जाना जाता है।

विहार एवं सम्यक् जीवनचर्या व्यक्ति के विकास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मनुष्य में समय के प्रति सचेत एवं कर्त्तव्यपरायणता तथा सृजनात्मकता की भावना का उद्दीपन करते हैं । विहार की अनेक गतिविधियाँ जैसे सम्यक् दिनचर्या का पालन, मनोरञ्जन एवं कला-साधना जैसे - गायन, वादन, नृत्य, चित्रकारी, कविता-लेखन आदि मनुष्य में रचनात्मकता की वृद्धि करते हैं । व्यायाम, नित्य योगाभ्यास, प्राणायाम, ध्यान एवं गहरी नींद के द्वारा मन भी प्रसन्न एवं शान्त रहता है । अतः एक नियमित जीवनचर्या को अपनाकर 'विहार' का श्रद्धापूर्वक पालन करें। आयुर्वेदोक्त जीवनचर्या का निरुपण इस प्रकार है -

- **दिनचर्या -**

  दिने दिने या चर्या, दिनस्य वा या चर्या सा दिनचर्या ।

  प्रत्येक दिन किये जाने वाले कार्य अपरिधर्य दिन चर्या कहे जाते हैं ।

  अ. हृ. सू. 2/9 अ. टीका

- **प्रातः ब्राह्ममुहुर्त में जागरण -**

  ब्राह्मे मुहूर्ते उत्तिष्ठेत् स्वस्थो रक्षार्थमायुषः ।

  स्वस्थ नीरोग व्यक्ति को अपनी आयु की रक्षा के लिये प्रातःकाल ब्रह्ममूहूर्त में उठना चाहिये ।

  रात्रेः चतुर्दशोमुहूर्तः ब्राह्ममुहूर्तः ।

  रात्रि का 14वाँ मूहूर्त ब्राह्ममूहूर्त कहलाता है, इसे त्वाष्ट्र मूहूर्त भी कहते हैं ।

  अ. हृ. सू. 2/9 अ. टीका

ब्रह्ममुहुर्त में उठना अत्यन्त दिव्य माना जाता है। इस समय वातावरण शान्त, स्वच्छ, सात्त्विक एवं सकारात्मकता से परिपूर्ण होता है।

- **नित्य शौचकर्म -**

  वेगान् न धारयेत् वात् विष्मूत्र क्षव तृड् क्षुधान् ।

  अपान वायु, मलमूत्र, छींक, प्यास, भूख आदि के वेग को नहीं रोकना चाहिये ।

वाग्भट

प्रातः शय्यात्याग के उपरान्त, नित्य शौचकार्य से निवृत्त होना चाहिए। शौच से पूर्व जनेऊ को नाभि से ऊपर लाकर दाएँ कान पर चढ़ा लें। सदा मौन रहकर ही शौच क्रिया करें।

- **दन्तधावन एवं जीह्वाशोधन -**

अर्कन्यग्रोध खदिर-करंज ककुमादिकम् ।

प्रातर्मुक्त्वा च मृद्वग्रं कषाय कटु तिक्तकम् ।

भक्षयेद्दन्तपवनं दन्त मांसान्यबाधयन् ।

अर्क (आकडा) न्यग्रोध (बरगद), खदिर (खैर या बबूल), करञ्ज (डिठौरी), ककुभ (अर्जुन) आदि के वृक्षों के दातुन (वृक्ष के तने के अग्र और मृदु भाग) प्रातः करना चाहिये, जिसमें मसूड़ों को पीड़ा न पहुँचाये। - अ. हृ. सू. 2

प्राकृतिक दतौने दाँतों के स्वास्थय के लिये लाभदायक होते हैं । आधुनिक टूथपेस्ट मे fluoride, tricloson आदि हानिकारक केमिकल्स पाए जाते है, जो अनेक व्याधियों का कारण बन सकते है।

जिह्वाशोधन -

दन्तधावन के पश्चात् धातु से निर्मित जीभी से जिह्वा पर सञ्चित मल दूर करने के लिए जिह्वाशोधन भी करना चाहिए।

जिह्वा निर्लेखनं रौप्यं सौवर्णंवार्क्षमेवचा ।

तन्मलापहरंशस्तं मृदुश्लक्ष्ण दशांगुलम् ॥

जीभ को साफ करने के लिये चाँदी या सोने अथवा लकड़ी की जीभी (जिह्वानिर्लेखन) बनवा लेनी चाहिये । - सु.चि. 24

- **तेल-गण्डूष -**

दन्तदार्ढ्यकरं रुच्यं स्नेह गण्डूष धारणम् ।

तैलगण्डूष करने से दन्त मजबूत होते है और वह रुचिकर होता है । यह मुखपाक या मुखदाह आदि पित्तज विकारों में लाभप्रद है । - सु.चि. 24

तिल-तेल अथवा अन्य औषधिसिद्ध तेल को जल की भाँति मुख में रखकर कुल्ला करने के समान कुछ समय परिचालन करते हुए थूक देना 'तेल गण्डूष' की प्रक्रिया कही जाती है। इसे अंग्रेजी में Oil pulling के नाम से जाना जाता है। इसके द्वारा शरीर के अन्दरूनी अङ्गों में जमे हुए विषाक्त पदार्थ बाहर निकल जाते हैं, स्वर एवं रसज्ञान उत्तम होता है। दन्तक्षय, दाँतों का हिलना, ओठों का फटना, कण्ठशोष आदि रोगो में तेल गण्डूष लाभदायक है।

- **नेत्रप्रक्षालन एवं मुखादिधावन -**

  सौवीरमंजनं नित्यं हितमक्ष्णोस्ततो भजेत ।

  योज्येत् सप्तरात्रेस्मात् स्त्रावणार्थे रसांजनम् ॥

सौवीर प्रदेश में होने वाला अंजन आँखों के लिये हितकर है, आँखों के कफ दोष निवारण के लिये सप्ताह में एक रात्रि अवश्य रसांजन का प्रयोग करना चाहिये । - अ. हृ. सू. 2

मुख एवं नेत्र-प्रक्षालन हेतु लोध्र-आमलक चूर्ण आदि को उबालकर शीतल किए जल से स्निग्धता एवं विषाक्त पदार्थ दूर होते है एवं चेहरा कान्तिमान् बना रहता है।

- **योगाभ्यास एवं व्यायाम -**

  शरीरचेष्टा च चेष्टा स्थैर्यार्थ्वा बलवर्द्धनी ।

  देह व्यायाम संस्थाना मात्रया तां समाचरेत् ॥

जो भी शरीर की चेष्टा (कर्म) अपने मन को अच्छी लगे, जो शरीर को स्थिरता प्रदान करती हो और बल को बढ़ाती हो, उसे व्यायाम कहते हैं । उसे अल्पमात्रा में करना चाहिये । - च.सू. 7

उक्त क्रियाओं से निवृत्ति के पश्चात् व्यायाम, सूर्यनमस्कार, योगासन, प्राणायाम करना चाहिए। ये अभ्यास शरीर में स्थिरता, बल एवं सामर्थ्य बढ़ाते है, माँस पेशियाँ सुदृढ़ बनाते है, हल्कापन एवं स्फूर्ति प्रदान करते हैं तथा कुपित दोषों एवं रोगों का नाश करते हैं।

- **नस्य एवं तैलाभ्यङ्ग -**

  स्पर्शनेचाधिको वायुः स्पर्शनं च त्वगाश्रितम् ।

  त्वच्यश्च परमोऽभ्यंगः तस्मातं शीलयेन्नरः ॥

शरीर की स्वस्थता के लिये अधिक वायु की आवश्यकता है, वायु का ग्रहण त्वचा पर आश्रित है, त्वचा के लिये अभ्यंग (तेल मालिश) परमोपकारी है । इसलिये मालिश करनी चाहिये । - च.सू. 5

- **नखकर्तन एवं क्षौरकर्म -**

  पञ्चरात्रान्तरश्मश्रुकेशरोमाणी कर्तयेत् ।

  केशश्मश्रुनखादीनां कर्तनं संप्रसाधनम् ।

  पौष्टीकं धन्यमायुष्यं शौच कान्तिकरंपरम् ॥

पाँचवें दिन नख, मश्रु, केश, आदि कटाना चाहिये, केश, दाढी, नख आदि का काटना शोभा देने वाला है । पुष्टि करने वाला, धन और आयुष्य करने वाला, स्वच्छता और तेज को बढाने वाला है ।

भा.प्र.

- **स्नान -**

दीपनम् वृष्यमायुष्यं स्नानमूर्जा बलप्रदम् ।

कंडूमल श्रमस्वेद तन्द्रा तृड् दाह पाप्मजित् ॥

स्नान करने से जठराग्नि प्रदीप्त होता है, यह वृष्य (वीर्यवर्धक) है, आयु को बढाता है, उत्साहशक्ति तथा बल को बढाता है, कण्डू (खुजली) मल, थकावट, पसीना, उँघाई, प्यास, दाह (जतन) तथा पाप (रोग) का नाश करता है ।

वाग्भट

प्रातःकाल स्नान के पश्चात् ही मनुष्य पूजन-पाठ, अध्ययन, जप- अनुष्ठान आदि मङ्गलकार्यों को करने के योग्य बनता है। अतः प्रातःस्नान अत्यन्त प्रशंसनीय है। स्नान हेतु चन्दनादि उबटन, मिट्टी का उपयोग आयुर्वेद में त्वचा के लिए लाभदायी बताया है। आधुनिक शैम्पू में मिलने वाले Sodium Laureth Sulfate (SLS) एवं साबुनों के केमिकल्स हानिकारक हो सकते हैं। अतः यदि सम्भव हो सके, आयुर्वेद-उबटन एवम् आयुर्वेद-साबुनों का ही उपयोग करें।

स्नान के पश्चात् भगवान् सूर्य को वैदिक-मन्त्रों का उच्चारण करते हुए अर्घ्य देने का विधान है। तत्पश्चात् शुद्ध वस्त्रधारण करें। निर्मल-वस्त्र धारण करने से दरिद्रता का नाश होता है; आयु एवं श्री में वृद्धि होती है तथा व्यक्तित्व प्रभावशाली प्रतीत होता है। भस्मादि धारण कर केश में तेल लगाकर कँघी से केशों को समुचित रूप से बनाना चाहिए। उक्त क्रियाओं के पश्चात् नित्य सन्ध्योपासना, वेदाध्ययन एवं दैनिक कार्यों को करना चाहिए।

- **रात्रिचर्या**

दैनिक नित्यकर्मों एवं व्यस्तता के पश्चात् शरीर की थकान को खत्म करने एवं स्वास्थ्य-लाभ के लिए रात्रिचर्या का पालन अत्यन्त अनुकरणीय है।

निद्रायतं सुखं दुःखं पुष्टिः कार्श्यं बलाबलम् ।

वृषता बलीबता ज्ञानमज्ञानं जीवितं न च ॥

भली प्रकार नींद आने पर सुख, पुष्टि, बल, वृषता, ज्ञान तथा दीर्घजीवन का लाभ मिलता है, इसके विपरीत निद्रा सही न होने पर मनुष्य दुःख, कृशता, दुर्बलता, क्लीबता, अज्ञान तथा मृत्यु को प्राप्त होता है ।

चरक

नित्य कर्मों को निर्धारित समय पर करने हेतु एक समय सारणी तैयार करें एवं सम्यक्-रूप से उसका पालन करें ।

निर्धारित समय	निर्धारित कार्य
प्रातः 5-6 बजे	योगाभ्यास
....	....

7.5 सद्वृत्त (आचार, विचार, व्यवहार)

जिस प्रकार स्वस्थ्य-हित के लिए आयुर्वेद में आहार, विहार, दिनचर्या, सम्यक् जीवनचर्या आदि का वर्णन किया गया है, उसी प्रकार मन के हितकर व्यवहार का विवरण भी सद्वृत्त (सम्यक् आचार, विचार एवं व्यवहार) के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। सद्वृत्त पालन के दो लाभ बताये गए हैं - आरोग्य एवम् इन्द्रियों तथा मन पर विजय।

आर्द्रसन्तानता त्यागः कायवाक्चेतसां दमः ।

स्वार्थबुद्धिः परार्थेषु पर्याप्तमिति सद्वृत्तम् ॥

सभी प्राणियों के प्रति दया का भाव रखना, त्यागी स्वभाव होना, शरीर, वाणी एवं मन पर नियन्त्रण रखना तथा दूसरों को स्वयं के समान मानकर प्रिय आचरण करना ही 'सद्वृत्त' (सदाचार) कहा गया है। -अ.हृ.सू. 2/46

सदाचार के माध्यम से ही मनुष्य अपनी आध्यात्मिक उन्नति हेतु समर्थ हो पाता है । यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) के पालन से भी व्यक्ति समाज एवं विश्व के लिए कल्याणकारी होता है एवं चहुँमुखी विकास से लाभान्वित होता है। विश्व, समाज एवं व्यक्तिगत परिप्रेक्ष्य में शान्ति एवं सकारात्मकता की स्थापना में सद्वृत्त का पालन अत्यन्त आवश्यक है। सदाचार के पालन से मनुष्य अपनी चेष्टाओं, मनोवृत्तियों, आदतों एवं संवेगों को नियन्त्रित करते हुए स्वयं को सृजनात्मक,

सकारात्मक तथा कल्याणकारी- मार्ग की ओर प्रशस्त करता है। सद्वृत्त हेतु आचरण में लाने वाले विषय इस प्रकार हैं

आत्म मूल्याङ्कन

रात्रि में नित्य सोने के पूर्व निम्नलिखित अभ्यास को करें -

1. सर्वप्रथम किसी भी ध्यानात्मक आसन में बैठकर नेत्रों को बन्द कर लें। लम्बी गहरी श्वासें लेवें।
2. पूरे दिन आपके द्वारा किए गए कार्यों एवं गतिविधियों के बारे में सोचते हुए इस प्रकार विचार करें
    - आज के दिन आपकी कार्य के प्रति निष्ठा तथा कार्य में सृजनात्मकता / उत्पादकता कितनी रही?
    - माता-पिता, गुरु एवं सहपाठियों से आज आपका कैसा व्यवहार रहा ?
    - आज आपने क्या गलतियाँ की ? किन बुरे विचारों को सोंचा एवम् उन गलतियों को सुधारने के लिए क्या कार्य किए जा सकते हैं ?
    - आज के दिन आपने क्या अच्छे कार्य किए ? उन अच्छे विचारों एवं कार्यों के लिए ईश्वर को धन्यवाद देवें तथा पुनः गलतियों को न दोहराने का सङ्कल्प लें ।
3. अब उन विचारों को सोचना बन्द करें एवं धीरे-धीरे श्वासों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए विश्राम करें ।

प्रश्नावली

प्रश्न 1) निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनिए –

1) निम्न में तनाव का मुख्य कारण किसे कहा जा सकता है -

अ) मित्रों से भेंट   ब) प्रातः की सैर

स) सुपाच्य भोजन   द) अनियमित जीवनचर्या

2) विपरीत प्रकृति अथवा गुणों से युक्त आहार पदार्थों को क्या कहते है -

अ) सात्त्विक आहार   ब) मिताहार

स) फलाहार   द) विरुद्ध आहार

3) निम्न में से प्रातः ब्रह्मवेला में जागरण करने के क्या लाभ है -

अ) स्वास्थ्य की प्राप्ति   ब) तेजस्विता की प्राप्ति

स) मेधाशक्ति की प्रप्ति   द) उपर्युक्त सभी

4) दन्तरोगों के लिए लाभदायक है -

अ) स्नान   ब) क्षौरकर्म

स) तैलाभ्यङ्ग   द) दन्धावन तथा तेल-गण्डुष

5) योगाभ्यास तथा व्यायाम करना चाहिए -

अ) रोग की स्थिति में   ब) निरुत्साह मन से

स) सामर्थ्यानुसार मात्रावत् रूप में   द) उपर्युक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1) स्वस्थवृत्त का वर्णन .... में मिलता है। (आयुर्वेद/ धनुर्वेद)

2) मौसम के अनुसार आहार-विहार .... के अन्तर्गत वर्णित है। (रात्रिचर्या/ऋतुचर्या)

3) चन्दनादि उबटन से युक्त मृत्तिका स्नान स्वास्थ्य के लिए ....है। (हानिकारक/लाभदायक)

4) श्रेष्ठ आचरण का पालन करना .... कहलाता है। (सद्वृत्त/स्वास्थ्यवृत्त)

5) दिवस हेतु पालनीय कृत्यों को .... कहते है। (जीवनचर्या/दिनचर्या)

प्रश्न 3) निम्नलिखित वाक्यों में से सत्य/असत्य बताईए –

1) नित्य शयन से पूर्व आत्ममूल्याङ्कन के विषय का चिन्तन हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है। (सत्य/असत्य)

2) भोजन ग्रहण करते समय वार्तालाप करना चाहिए। (सत्य/असत्य)

3) नित्य स्नान करने से रोगों से बचा जा सकता है। (सत्य/असत्य)

4) शौच क्रिया सदा मौन होकर करनी चाहिए। (सत्य/असत्य)

5) नित्य विहार हमारे मन तथा शरीर के स्वास्थ्य हेतु हानिकारक है। (सत्य/असत्य)

प्रश्न 4) सही जोड़ियाँ बनाईए –

1)	तनाव	अ) स्वास्थ्यकर
2)	शौचकर्म	ब) नेत्रों के लिए हितकर
3)	नित्य विहार	स) सत्त्वशुद्धिः
4)	आहारशुद्धौ	द) बाह्य एवं आन्तरिक
5)	रसांजन	ई) अनियमित जीवनचर्या

प्रश्न 5) अतिलघुत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1) दिनचर्या के अन्तर्गत सभी आवाश्यक एवं आचरणीय अंगों के नाम लिखिए ?

2) आहार की शुचिता के सम्बन्ध में छान्दोग्योपनिषत् में क्या कहा गया है ?

3) तनाव के मुख्य कारणों का उल्लेख कीजिए ?

4) योगाङ्ग 'यम' के अन्तर्गत निहित अङ्गों के नाम लिखिए ?

5) दन्तधावन के लिए उपयोग की जाने वाले विभिन्न वृक्षों की काष्ठ से निर्मित दातौनों के नाम लिखिए?

प्रश्न 6) लघुत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1) भगवद्गीता के अनुसार कैसे साधक के सभी दुःखों का नाश हो जाता है ?

2) दिनचर्या से क्या तात्पर्य है ?

3) तेल गण्डूष के क्या लाभ है ?

4) सम्यक् निद्रा से क्या लाभ है ?

5) आचार्य चरक ने योगाभ्यास एवं व्यायाम के विषय में क्या कहा है ?

प्रश्न 7) दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1) सद्वृत्त का वर्णन करते हुए शास्त्र सन्दर्भ का उल्लेख कीजिए ?

2) दिनचर्या के सभी अङ्गों को समझाईए ?

3) तनाव प्रबन्धन का वर्णन करते हुए उक्त समस्या के निदान हेतु शास्त्रानुसार सन्दर्भों का वर्णन कीजिए ?

4) आत्म मूल्याङ्कन हेतु आवश्यक विषयों का उल्लेख कीजिए?

5) आहार एवं विरुद्ध आहार की विस्तृत रूप से व्याख्या कीजिए ?

परियोजना-कार्य

❖ सभी छात्र योगमय एवं आयुर्वेदोक्त आहार, विहार, सदाचरण से सम्बन्धित प्रविष्टियों को नियमपूर्वक नित्य दैनन्दिनी में करें।

अध्याय – अष्टम्

वेदोक्त ध्यान एवं मन्त्र अनुप्रयोग

> ➢ **हम अध्ययन करेंगे-**
>
> 8.1 परिचय
>
> 8.2 पुरुष सूक्त
>
> 8.3 प्रज्ञा विवर्धन स्तोत्र
>
> 8.4 योगसूत्र (समाधिपाद एवं साधनपाद)

8.1 परिचय -

प्रिय विद्यार्थियों ! प्रस्तुत अध्यायान्तर्गत हम वैदिक मन्त्रों में निहित उच्चारणों पर ध्यानाभ्यास के महत्त्व को जानेंगे। उपनिषत् में निहित समग्र विषयों को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया जा सकता है- ' वाक्' एवं 'अर्थ' । 'वाक्' से तात्पर्य औपनिषदीय मन्त्रों एवं उनकी सस्वर उच्चारण पद्धति से है, वहीं 'अर्थ' से तात्पर्य ध्यानादि साधनाओं के द्वारा उन मन्त्रों में निहित गूढ़ तत्वों की अनुभूति से है। अतः वाक (मन्त्रोच्चार) एवं अर्थ (मन्त्रों में - निहित गूढ़ दृष्टि का ज्ञान) दोनों ही एक-दूसरे के पूरक तत्व है।

अतः स्पष्ट है कि औनिषदीय मन्त्रों में निहित दिव्य स्पन्दनों की अनुभूति (ज्ञान) तथा उनसे जुड़े शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक लाभों की प्राप्ति का महत्वपूर्ण साधन 'मन्त्र आधारित ध्यान साधनाएँ' कही जा सकती है। आइए! वैदिक सूक्तों एवं मन्त्रों पर ध्यानाभ्यास के द्वारा उक्त लाभों को प्राप्त करें।

8.2 पुरुषसूक्त

शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिनी शाखा के 31 वें अध्याय में इस सूक्त का उल्लेख है। इस सूक्त में 16 मन्त्र हैं। इस सूक्त के देवता पुरुष तथा ऋषिः नारायण हैं। इस सूक्त में अनुष्टुप् एवं त्रिष्टुप् छन्दों का प्रयोग है।

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ स भूमिꣳ सर्वत स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १ ॥

पुरुष एवेदꣳ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ॥ उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ २ ॥

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ॥ पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥ ३ ॥

॥ त्रिपादूर्ध्वः ॥ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ॥

ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥ ४ ॥

॥ ततो विराट् ॥ ततो विराडजायत विराजोऽअधि पूरुषः ॥

स जातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ५ ॥

॥ तस्माद्यज्ञात् ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम् ॥

पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥ ६ ॥

॥ तस्माद्यज्ञात् ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे ॥

छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ ७ ॥

॥ तस्मादश्वाः ॥ तस्मादश्वाऽअजायन्त ये के चोभयादतः ॥

गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः ॥ ८ ॥

॥ तं यज्ञम् ॥ तं यज्ञम्बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः ॥

तेन देवाऽअयजन्त साध्याऽऋषयश्च ये ॥९॥

॥ यत्पुरुषम् ॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ॥

मुखङ्किमस्यासीत्किम्बाहू किमूरू पादाऽउच्येते ॥ १० ॥

॥ ब्राह्मणोस्य ॥ ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ॥

ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳ शूद्रोऽअजायत ॥ ११ ॥

॥ चन्द्रमामनसः ॥ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽअजायत ॥

श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥१२॥

॥ नाभ्याऽआसीत् ॥ नाभ्याऽआसीदुन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत

॥ पुद्भ्याम्भूमिर्दिशुꣳ श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ ॥ऽअंकल्प्पयन् ॥ १३ ॥

॥ यत्पुरुषेण॥ यत्पुरुषेण हुविषा देवा युज्ञमतंन्वत ॥

व्वुसन्तोस्यासीदाज्ज्यंग्ग्रीष्म्मऽइद्ध्मः शुरद्धविः ॥ १४ ॥

॥ सुप्तास्यासन् ॥ सुप्तास्यासन्नपरिधयुस्त्रिः सुप्त सुमिधः कृताः ॥

देवा यद्युज्ञन्तंन्न्वाुनाऽअबंद्ध्नुन्पुरुषम्पुशुम्॥ १५॥

॥ युज्ञेनंयुज्ञम् ॥ युज्ञेनं युज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथुमान्न्यासन् ॥

ते ह नाकम्महिमानः सचन्तु यत्र पूर्व्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ॥ १६ ॥ [१६-१]

॥ अुद्भ्यः सम्भृतः ॥ अुद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च व्विश्श्वकर्म्मणुꣳ सम- वर्त्तताग्ग्रे ॥

तस्यु त्त्वष्टा व्विदधंद्रूपमेति तन्मर्त्त्यस्य देवुत्त्वमाुजानुमग्ग्रे ॥ १७ ॥

॥ व्वेदाुहम् ॥ व्वेदाुहमेतम्पुरुषम्मुहान्तमादित्त्यवर्ण्णुन्तमसः पुरस्तात् ॥

तमेव व्विदित्त्वाति मृत्युमेति नान्न्यः पन्था व्विद्युतेयनाय ॥ १८ ॥

पुरुष सूक्त का भावार्थ-

1. परम पुरुष परमात्मा अनन्त सहस्त्रों सिरोंवाला असंख्य आँखोंवाला असंख्य पैरोंवाला है। वह सभी ओर से पृथिवी को स्पर्श कर भी जगत विकारों से दश- अङ्गुल अधिक दूरी पर स्थित है अर्थात् पृथिवी की तुलना में वह सर्व व्यापक है। इसको ढकने के बाद भी वह बचा रहता है। यहाँ पर सहस्र अनन्त असंख्य का बोध कराता है। वास्तव में परमात्मा का स्वरूप अवर्णनीय है। वह सीमातीत विभुव्यापक है।
2. यह सब कुछ परम पुरुष परमात्मा ही है जो बीत चुका एवं जो होने वाला है अर्थात् भूतकाल तथा भविष्य काल का जगत् परमात्मा ही है। वह अमृत का स्वामी है और जो अन्न के द्वारा अन्न को खाकर वृद्धि को प्राप्त करता हैं, उनका भी वही स्वामी है अर्थात् अतीत-वर्तमान अनागत

यह त्रैकालिक जगत् परमात्मा से परिव्याप्त है एवं अमर कहे जाने वाले देवों तथा मरणधर्मा मनुष्यादि जीवों का वही स्वामी है।

3. इस परम पुरुष की व्यक्त की अपेक्षा अव्यक्त महिमा बहुत अधिक है, इसके अतिरिक्त इतनी अधिक महिमा है लेकिन यह पुरुष इससे भी बहुत अधिक बढ़कर है अर्थात् जो कुछ दृश्यमान जगत् है वह पुरुष अव्यक्त है लेकिन इसकी अव्यक्त महिमा बहुत अधिक है। समस्त इसका चतुर्थ भाग है इसके तीन पैर तीन चौथाई भाग अमृत लोक में है एवं वे भी द्युलोक में हैं।

4. यह परम पुरुष तीन पैरो, तीन चौथाई भाग के साथ ऊपर द्युलोक चला गया एवं इसका एक पैर चतुर्थांश यहाँ पर इस ब्रह्माण्ड में पंचरूप रह गया उसी चतुर्थांश की पूर्णावस्था द्वारा सर्वत्र परिव्याप्त है।

5. उस परम पुरुष से विराट् उत्पन्न हुआ एवं इस विराट् को आधार बना कर पुरुष उत्पन्न हुआ तत्पश्चात् उसने पृथिवी और लोकों की रचना की।

6. उस सर्वहोम यज्ञपुरुष रूपी हवनीय द्रव्य से यह खाद्य –पेय से परिपूर्ण कर सका। उसने उन वायु प्रधान पशुओं का निर्माण किया।

7. उस सर्वहोम यज्ञपुरुष से ऋचाएँ और सामगान उत्पन्न हुए गायत्री आदि छन्द उस पुरुष से उत्पन्न हुए तथा यजुर्वेद की भी उसी से उत्पत्ति हुई।

8. उससे अश्व उत्पन्न हुआ, साथ ही दोनों ओर दाँतों वाले पशुओं को बनाया। उसी से गो, वृषभ, अश्व और अज आदि की उत्पत्ति हुई।

9. प्रथम उत्पन्न उस परमात्मा पुरुष को यज्ञ हेतु दर्भों से प्रोक्षित किया गया। उससे देवों ने यजन किया जो भी साध्य और ऋषि थें।

10. ऋषियों ने उस पुरुष की कल्पना की, अनेक प्रकार से उन्होंने अपने चिन्तन द्वारा कल्पना की कि इसका मुख क्या था बाहु क्या? तथा क्या जंघाएँ व पाद कहें जाते हैं?

11. ब्राह्मण पुरुष का मुख, दोनों भुजाएँ क्षत्रिय, ऊरु वैश्य और दोनों पैर शुद्र थें अर्थात् इस पुरुष के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जंघाओं से वैश्य एवं पैरों से शूद्रों की उत्पत्ति हुई।

12. इस पुरुष के मन से चन्द्रमा, नेत्रों से सूर्य, श्रोत्र से वायु व प्राण, मुख से अग्नि उत्पन्न हुआ।

13. पुरुष की नाभि से अन्तरिक्ष लोक, सिर से द्युलोक, दोनों पैरों से पृथिवी, कानों से पूर्व-पश्चिमादि दिशाओं की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार लोकों की प्रकल्पना की गई।

14. पुरुष रूपी हविः से देवताओं ने यज्ञ (सृष्टि) का विस्तार किया तो वसन्त ऋतु इस यज्ञ का घृत, गर्मी ईंधन तथा शरद ऋतु यज्ञ की हविः थी।

15. यज्ञ की सात परिधियाँ थी। सात समिधाएँ बनाई गई, तथा देवताओं ने यज्ञ का विस्तार करते हुए प्रजापति पुरुष को ही आलम्भ्य पशु कर बांधा था।

16. देवताओं ने यज्ञ से ही यज्ञपुरुष का यजन किया गया, लेकिन वे पूर्व के धर्म थे। उन महिमावान् ऋषियों ने यजन के द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया था। जहाँ पूर्व साध्य एवं देवता निवास करते हैं।

8.3 प्रज्ञा विवर्धन स्तोत्र

8.4 पातञ्जल योग सूत्र

योग-विद्या अनन्तकाल से ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में सनातन-विद्या के रूप में व्याप्त है, जिसका ज्ञान हमारे महान् ऋषियों एवं मुनियों को समाधि (योग) की अवस्था में हुआ, परन्तु कालान्तर में महर्षिपतञ्जलि के अवतरण के पश्चात् उन्होंने इस योगरूपी विशुद्ध ज्ञान को एक सुव्यवस्थित लिखित संहिता का रूप प्रदान किया जिसे "पतञ्जलियोगसूत्र" के नाम से जाना जाता है। भारतीयदर्शन-परम्परा के आस्तिक षड्दर्शनों में से एक 'योगदर्शन' को भी माना है।

सामान्य-भाषा में 'दर्शन' शब्द से तात्पर्य 'देखने' - रूप में ही लिया जाता है, परन्तु दर्शनशास्त्र के रूप में दर्शन शब्द का अर्थ 'आत्मानुभूति एवं बौद्धिक ज्ञान के आधार पर वस्तु अथवा तत्त्व के यथार्थ शुद्ध सात्त्विक स्वरूप को जानने' हेतु आवश्यक 'दृष्टिकोण' से है। इसी प्रकार 'योगदर्शन' योगशास्त्र की अवधारणाओं से युक्त अन्तःदृष्टि के माध्यम से तत्त्वज्ञान का बोध करना है। इसे 'अष्टाङ्गयोग-दर्शन' के रूप में भी जाना जाता है। महर्षिपतञ्जलिकृत योगसूत्र में योग-विषयक चिन्तन का अत्यन्त सरल, स्पष्ट, वैज्ञानिक एवं मनोविश्लेषणात्मक तथ्यों के आधार पर प्रतिपादन किया गया है। योगसूत्र को चार पाद (समधिपाद, साधनपाद, विभूतिपाद, कैवल्यपाद) में विभाजित करके 195 सूत्र (कहीं-कहीं 196 सूत्र) में प्रस्तुत किया गया है। अंग्रेजी में इन्हें 'Verses on yoga' कहते हैं। सूत्र का वास्तविक अर्थ 'धागा' होता है। अतः योगसूत्र, योग से सम्बधित विचार एवम् अवधारणाओं की गूँथी हुई माला है, जिसमें

निरन्तर तत्त्वबोध का दर्शन निहित है। इसे अत्यन्त सुस्पष्ट एवं व्यवस्थित-क्रम में प्रस्तुत करने में महर्षिपतञ्जलि की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

योगेन चितस्य, पदेन वाचां, मलं शरीरस्य च वैद्यकेन ।

योऽपाकरोत्तं प्रवरं मुनीनां, पतञ्जलिं प्राञ्जलिरानतोऽस्मि ॥

अर्थात् मैं मुनियों में श्रेष्ठ उन पतञ्जलि मुनिवर को अञ्जलिबद्ध होकर (हाथ जोड़कर) नमन करता हूँ, जिन्होंने योग से अन्तःकरण के, पद (व्याकरण- महाभाष्य) से वाणी और वैद्यक-ग्रन्थों से शरीर के मलों को दूर किया है।

योगसूत्र को निम्नलिखित चार पादों में विभक्त किया गया है, जो इस प्रकार है –

स.क्र	**पाद**	**सूत्र सङ्ख्या**
1.	समाधिपाद	51 सूत्र
2.	साधनपाद	55 सूत्र
3.	विभूतिपाद	55 सूत्र
4.	कैवल्यपाद	34 सूत्र
कुल		**195 सूत्र**

समाधिपाद

इस अध्याय में 51 सूत्र हैं जिनमें योग की परिभाषा (लक्षण), उद्देश्य (फल), वृत्ति के प्रकार एवं परिचय, वृत्ति-निरोध के उपाय (अभ्यास एवं वैराग्य) सम्प्रज्ञात एवम् असम्प्रज्ञात समाधि, ईश्वर एवं ऊँकार (प्रणव) सबीज-निर्बीज समाधि आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है।

अथ समाधिपादः

अथ योगानुशासनम् ॥1॥

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥2॥

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ॥3॥

वृत्तिसारूप्यम् इतरत्र ॥4॥

वृत्तयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः ॥5॥

प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः ॥6॥

प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि ॥7॥

विपर्ययो मिथ्याज्ञानम् अतद्रूपप्रतिष्ठम् ॥8॥

शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः ॥9॥

अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा ॥10॥

अनुभूतविषयासम्प्रमोषः स्मृतिः ॥11॥

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः ॥12॥

तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः ॥13॥

स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमिः ॥14॥

दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसञ्ज्ञा वैराग्यम् ॥15॥

तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतृष्ण्यम् ॥16॥

वितर्कविचारानन्दास्मितारूपानुगमात् सम्प्रज्ञातः ॥17॥

विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः ॥18॥

भवप्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम् ॥19॥

श्रद्धावीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम् ॥20॥

तीव्रसंवेगानाम् आसन्नः ॥21॥

मृदुमध्याधिमात्रत्वात्ततोऽपि विशेषः॥22॥

ईश्वरप्रणिधानाद्वा ॥23॥

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः॥24॥

तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्॥25॥

पूर्वेषामपि गुरुःकालेनानवच्छेदात्॥26॥

तस्य वाचकः प्रणवः॥27॥

तज्जपस्तदर्थभावनम्॥28॥

ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च॥29॥

व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रान्तिदर्शनालब्ध-

भूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः॥30॥

दुःखदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः॥31॥

तत्प्रतिषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासः॥32॥

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां

भावनातश्चित्तप्रसादनम्॥33॥

प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य॥34॥

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धनी॥35॥

विशोका वा ज्योतिष्मती॥36॥

वीतरागविषयं वा चित्तम्॥37॥

स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा॥38॥

यथाभिमतध्यानाद्वा॥39॥

परमाणुपरममहत्त्वान्तोऽस्य वशीकारः॥40॥

क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु

तत्स्थतदञ्जनतासमापत्तिः॥41॥

तत्र शब्दार्थज्ञानविकल्पैः सङ्कीर्णा सवितर्का समापत्तिः॥42॥

स्मृतिपरिशुद्धौ स्वरूपशून्येवार्थमात्रनिर्भासा निर्वितर्का॥43॥

एतयैव सविचारा निर्विचारा च सूक्ष्मविषया व्याख्याता॥44॥

सूक्ष्मविषयत्वं चालिङ्गपर्यवसानम्॥45॥

ता एव सबीजः समाधिः॥46॥

निर्विचारवैशारद्येऽध्यात्मप्रसादः॥47॥

ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा॥48॥

श्रुतानुमानप्रज्ञाभ्यामन्यविषया विशेषार्थत्वात्॥49॥

तज्जः संस्कारोऽन्यसंस्कारप्रतिबन्धी॥50॥

तस्यापि निरोधे सर्वनिरोधान्निर्बीजः समाधिः॥51॥

इति श्रीपातञ्जले योगशास्त्रे समाधिनिर्देशो नाम प्रथमः पाद॥ 1॥

साधनपाद

इसके अन्तर्गत 55 सूत्र आते हैं, जिनमें पञ्च क्लेश (जीवन के मूलभूत तनाव), क्लेश निवृत्ति के उपाय, क्रियायोग, अष्टाङ्गयोग पर चर्चा, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार (बहिर्मुखी अङ्ग) आदि का उल्लेख है।

अथ साधनपादः

तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः॥1॥

समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च॥2॥

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः॥3॥

अविद्याक्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम्॥4॥

अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या॥5॥

दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता॥6॥

सुखानुशयी रागः॥7॥

दुःखानुशयी द्वेषः॥8॥

स्वरसवाही विदुषोऽपि तथारूढोऽभिनिवेशः॥9॥

ते प्रतिप्रसवहेयाः सूक्ष्माः॥10॥

ध्यानहेयास्तद्वृत्तयः॥11॥

क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः॥12॥

सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः॥13॥

ते ह्लादपरितापफलाः पुण्यापुण्यहेतुत्वात्॥14॥

परिणामतापसंस्कारदुःखैर्गुणवृत्तिविरोधाच्च दुःखमेव सर्वं विवेकिनः॥15॥

हेयं दुःखमनागतम्॥16॥

द्रष्टृदृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः॥17॥

प्रकाशक्रियास्थितिशीलं भूतेन्द्रियात्मकं भोगापवर्गार्थं दृश्यम्॥18॥

विशेषाविशेषलिङ्गमात्रालिङ्गानि गुणपर्वाणि॥19॥

द्रष्टा दृशिमात्रः शुद्धोऽपि प्रत्ययानुपश्यः॥20॥

तदर्थ एव दृश्यस्यात्मा॥21॥

कृतार्थं प्रति नष्टमप्यनष्टं तदन्यसाधारणत्वात्॥22॥

स्वस्वामिशक्त्योः स्वरूपोपलब्धिहेतुः संयोगः॥23॥

तस्य हेतुरविद्या॥24॥

तदभावात् संयोगाभावो हानं तद्दृशेः कैवल्यम्॥25॥

विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः॥26॥

तस्य सप्तधा प्रान्तभूमिः प्रज्ञा॥27॥

योगाङ्गाऽनुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः॥28॥

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि॥29॥

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः॥30॥

जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम्॥31॥

शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः॥32॥

वितर्कबाधने प्रतिपक्षभावनम्॥33॥

वितर्का हिंसादयः कृतकारितानुमोदिता लोभक्रोधमोहपूर्वका

मृदुमध्याधिमात्रादुःखाज्ञानानन्तफला इति प्रतिपक्षभावनम्॥34॥

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः॥35॥

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्॥36॥

अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्॥37॥

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः॥38॥

अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासम्बोधः॥39॥

शौचात् स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः॥40॥

सत्त्वशुद्धिसौमनस्यैकाग्र्येन्द्रियजयात्मदर्शनयोग्यत्वानि च॥41॥

सन्तोषादनुत्तमसुखलाभः॥42॥

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः॥43॥

स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः॥44॥

समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात्॥45॥

स्थिरसुखमासनम्॥46॥

प्रयत्नशैथिल्यानन्तसमापत्तिभ्याम्॥47॥

ततो द्वन्द्वानभिघातः॥48॥

तस्मिन्सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः॥49॥

बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकालसङ्ख्याभिः परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्मः॥50॥

बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थः॥51॥

ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्॥52॥

धारणासु च योग्यता मनसः॥53॥

स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः॥54॥

ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम्॥55॥

इति श्रीपातञ्जले योगशास्त्रे साधननिर्देशो नाम द्वितीयः पादः॥2॥

प्रश्नावली

कण्ठस्थीकरण एवं ध्यानाभ्यास -

- शिवसंकल्पसूक्त।
- योगसूत्र (प्रथम एवं द्वितीय पाद)
- प्रज्ञाविवर्धन स्तोत्र
- श्रीमद्भगवद्गीता (अध्याय – 6 से 10)

परियोजना कार्य

- वैदिक सूक्तों एवं वैदिक मन्त्रों पर ध्यान साधना से सम्बन्धित लेखों, शोधपत्रों आदि का संग्रहण करें तथा उक्त अभ्यास से होने वाले लाभों की चर्चा मित्र, परिवार एवं सामन्यजन से करें ताकि वे भी वैदिक मन्त्रों में निहित जीवनी शक्ति के द्वारा अनेक मनदैहिक रोगों से मक्त हो सकें।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- हठप्रदीपिका, कैवल्यधाम, लोनावला
- घेरण्डसंहिता, मुंगेर योग विद्यालय, बिहार
- आसन प्राणायाम मुद्राबन्ध, मुंगेर योग विद्यालय, बिहार
- बच्चों के लिए योग-शिक्षा- भाग १ एवं २ , मुंगेर योग विद्यालय, बिहार
- पतञ्जलि योग सूत्र, गीताप्रेस, गोरखपुर एवं चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी)
- वेदों में योग विद्या, संस्करण 1983 (यौगिक शोध संस्थान, हरिद्वार)
- आरोग्यांक, गीता प्रेस गोरखपुर।
- योगांक, गीता प्रेस गोरखपुर।
- जीवनचर्या विज्ञान – गीता प्रेस गोरखपुर।
- सूर्यनमस्कार, मुंगेर योग विद्यालय, बिहार
- प्राणायाम, कैवल्यधाम लोनावला
- योगाभ्यास की अध्यापन विधियाँ
- सामान्य योग प्रोटोकॉल, आयुष मन्त्रालय, भारत सरकार
- योग एवं आयुर्वेद, सत्यम पब्लिकेशन, डॉ. पिंकी भनोट
- योगसूत्रम्, डॉ. राकेश शास्त्री,चौखम्बा पब्लिकेशन, वाराणसी
- हठयोगत्रयी, सुभाष विद्यालंकार, डा.राधेश्याम शुक्ल, प्रतिभाप्रकाशन, दिल्ली
- पतंजलि योग सूत्र, बी. के.एस. आयंगार, प्रतिभाप्रकाशन, दिल्ली
- सभी के लिए योग, बी. के.एस. आयंगार, प्रतिभाप्रकाशन, दिल्ली
- बच्चों के लिए योग् शिक्षा भाग-1 एवम् भाग-2, स्वमी सत्यानन्द सरस्वती, योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, मुंगेर (बिहार)
- योग एवं शारीरिक शिक्षा, एम.एल. घरोटे, कैवल्यधाम आश्रम लोनावाला, पूणे
- Note on Basic Principal and Methods of Teaching (yogic practices), Dr. Shri Krishna, कैवल्यधाम आश्रम लोनावाला, पूणे
- योग एवं मानसिक स्वास्थ्य, रणजितसिंह भोगाल, कैवल्य धाम आश्रम लोनावाला, पूणे

- प्राणायाम, स्वामी कुवलयानन्द, श्री मन्माधव योगमन्दिर समिति, कैवल्यधाम, पूणे
- Asana Why& How, ओमप्रकाश तिवारी, श्री मन्माधव योगमन्दिर समिति, कैवल्यधाम, पूणे
- योगाभ्यासों की अध्यापन विधियाँ, मनोहर लक्ष्मण घरोटे, श्रीमन्तकुमार गांगुली, श्री मन्माधव योगमन्दिर समिति, कैवल्यधाम, पूणे
- Anatomy & Physiology: yogic context, Sharad Chandra Bhalekar श्री मन्माधव योगमन्दिर समिति, कैवल्यधाम, पूणे
- योग उपनिषद् संग्रह शिक्षा भाग-1 एवम् भाग-2, परम हंस स्वामी अनन्त भारती, चौखम्बा पब्लिशर्स, वाराणसी
- स्वस्थवृत्तम्, डा. अशोक कुमार मिश्र, चौखम्बा पब्लिशर्स, वाराणसी
- ऋतुचर्या ,डा. स्वामी नाथ मिश्र, चौखम्बा पब्लिशर्स, वाराणसी
- योग और आयुर्वेद, आचार्य राजकुमार जैन, चौखम्बा पब्लिशर्स, वाराणसी
- योग एवं निसर्गोपचार, डाँ.चन्द्रभान शर्मा, चौखम्बा पब्लिशर्स, वाराणसी

सहायक पुस्तकें एवं सामग्री :-

- Illustrated light on yoga by BKS Iyanger (2005 Edition)
- Sivananda's yoga Teacher's Training Manual – Sivananda International Headquarter Quebec
- SVYASA Research Paper's – (SVYASA, Banglore)
- योग एवं स्वास्थ्य (स्वामी निरंजनानंद सरस्वती) – (मुंगेर योग विद्यालय, बिहार)
- सम्पूर्ण योग विद्या (राजीव जैन 'त्रिलोक') संस्करण 2015
- आयुर्वेद चिकित्सा, संस्करण 2016 – मालविका प्रकाशन
- योग एवम आयुर्वेद- सत्यम पब्लिशिंग हाउस।

राष्ट्रीय आदर्श वेद विद्यालयों
वेद पाठशालाएँ तथा गुरु-शिष्य परम्परा इकाइयाँ

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

Vedavidya Marg, Chintaman Ganesh, Post. Jawasia, Ujjain 456006 (M.P.)

दूरभाष/Phone : (0734) 2502255, 2502254

E-mail : msrvvpujn@gmail.com, Website - www.msrvvp.ac.in